।। श्री केशरीयाजी ।।

बोल्या (बूंलिया) वंश की उत्पत्ति एवं संक्षिप्त इतिहास

श्री नवकार मंत्र

णमो अरिहंताणं ।
णमो सिद्धाणं
णमो आयरियाणं ।
णमो उवज्झायाणं ।
णमोलोए सव्व साहूणं ।
एसो पंच णमुक्कारो सव्व पावप्पणासणो ।
मंगलाणं च सव्वेसिं पढमं हवई मंगलं ।

मंगलं भगवान वीरो मंगलं गौतम प्रभु, मंगलं स्थूलि भद्राधाः, जैन धर्मोऽस्तु मंगलं ।।

जिस प्रकार से जैन धर्म में समय समय पर 24 तीर्थकरों की श्रंखलाओं का निर्माण हुआ, शास्त्रो के अनुसार पूर्वचौबीसी, वर्तमान चौबीसी एवं भावी चौबीसी के सभी तीर्थकरों के नाम उपलब्ध है उसी प्रकार जिन शासन की शोभा बढ़ाने के लिए भी बोल्या (बूंलिया) परिवार समय–समय पर सेवा करते आये । पारिवारिक ज्ञात के अनुसार सर्वप्रथम बोल्या (बूंलिया) वंश की उत्पत्ति सं. 222 में हुई जब राजा चम्पक सैन गेरू वंश राजपूत से जैन धर्म स्वीकार करशासकों के साथ अपना कर्तव्य निभाते रहे, उस समय की पीढ़ी निम्न प्रकार की है। हरिशचन्द्र – राजन – सिंमल – करमान – विश्रासीन – अजय भज – गहेप – विजयपाल – जन पाल – विजयपाल सिंहोणी – गंगेव – हरिसिंह – भूपसेन – संतकुमार – प्रामदेव – भीमसिंह – वरसिंह रागसिंह – महाधवल – ब्यामसिंह – धनराजजी चाहजी और कानजी हुए और इनकी शाखाएं फलती–फूलती रही। कालान्तर में यह परिवार एक तरह से विलीन हो गया । लेकिन वि. सं. 719 में इस परिवार का पुनः जागरण हुआ जो इतिहास की दृष्टि से चौहान वंश (राजपूत) से बोल्या (बूंलिया) परिवार का सूत्रपात हुआ। पौराणिक ग्रन्थ के अनुसार इस परिवार की उत्पत्ति के संबंध में कुछ पंक्तियाँ निम्नलिखित है।

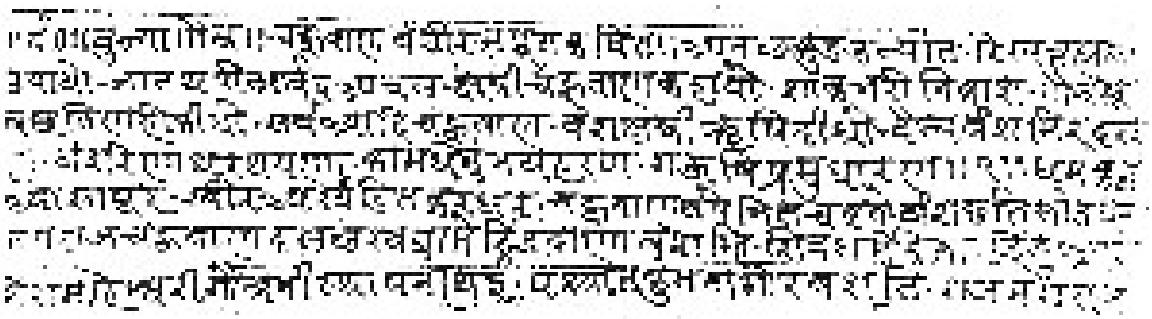

इस ग्रन्थ के अनुसार इस वंश का मूल पुरूष नरदेवजी डिडवाना राज्य के चौहान वंशीय राजा नगराज के द्वितीय पुत्र थे। एक समय कु. नरदेवजी अपनी स्त्री का आणा (गोना) लेकर घर लौट रहे थे। उस समय नागौर के पास बूंली ग्राम में उसर बाड़ी में मुकाम किया तब नरदेव जी की पत्नी को बहुत प्यास लगी और अपने पति को पानी के लिए कहा । तब नरदेव को उसर बाड़ी में एक बबूल वृक्ष नीचे एक बावड़ी नजर आई, वहाँ जाकर सभी उमराव सरदारो ने निर्मल जल पीया, ऊष्णकाल की वजह से और मार्ग की थकावट से सभी लश्कर आराम करने लेटे और गहरी निद्रा में सो गये। उस समय बावड़ी में से पीपल वृक्ष की खोह में से एक भंयकर काला विषधर नाग नरदेवजी

के पास आया और अपने श्वास से श्वास मिलाया, बाद में अपने स्थान लौट गया। कुछ समय बाद जब सेवकगण जागे तो देखा नरदेवजी का सारा शरीर नीला पड़ा हुआ है जिसको देखकर हाहाकार मच गया और उनकी पत्नी नवला देवी महाविलाप करने लगी, अनेक समझदारों ने बताया कि इनको सर्प ने डसा है। कई मंत्र तंत्र किये गये पर निष्फल गये और उनकी स्त्री ने सती होने की तैयारी की। उनके वृद्ध भ्राता सागोजी को नागौर से बुलाया। उन्होंने आकर देखा कि भाई मृत अवस्था में पड़ा है और औषधी – भौपा, भरड़ा, यंत्र तंत्र सब किया। लेकिन निष्फल रहा और विलाप करने लगे। विलाप करते समय उनके समीप आचार्य भट्टारक श्री कृष्णारिक सूरिजी तपस्या करते नजर आये, सागोजी लश्कर सहित उद्यान जाकर आचार्य जी के पांव लगे और विनती की कि हे प्रभु मेरे लघु भ्राता पीपल वृक्ष के नीचे मृतक पड़ा है उसे जीवन दान दो नहीं तो मैं आत्मघात करूगां या आत्म समर्पण करूगां । तब गुरूजी बोले–भाई धर्म को याद करो उससे कल्याण होगा, तब सागोजी बोले हे महाराज हम धर्म समझे नहीं। हम महापापी, राग द्वेष से भरे हुए है इसलिए आपको ही हमारा उद्धार करना है। तब गुरूजी ने लाभ का कारण समझ मृतक के पास आकर वासक्षेप मंत्र करके मस्तक पर डाल नवकार महामंत्र सुनाया और विष उपचार का पाठ किया। पश्चात् पीपल वृक्ष फाड कर पीपलाज माता प्रगट हुई और विष हरण किया, नरदेव जी जीवित हो गए । तब सभी लोग गुरूजी के पाँव पड़े। गुरूजी ने धर्मोपदेश दिया और उपदेश सुनकर सभी ने जैन धर्म स्वीकार किया तथा सप्त व्यंजन, कंदमूल का त्याग किया, रात्री भोजन निषेध किया और बारावृत का पालन करते हुए सागाजी, नरदेवजी ने सं. 719 वैशाख सुदी 5 को बूंली ग्राम में बबूल वृक्ष के नीचे भट्टारक आचार्य श्री कृष्णरिकसूरिजी ने (बूंलिया) बोल्या गौत्र की स्थापना की जो आगे चलकर बोल्या, बोलिया बूंलिया कहलाई। भट्टारकजी श्री कृष्णरिकसूरीजी के उपदेश से चव्हाण वंश केला व पीपल पित्र पूर्वज के रूप में पूजेंगे, बूंली गांव से बोल्या नागौर नगर में गये वहाँ पर राजा सागो व भाई नरदेव को ओसवाल जाति में शामिल कर दिया।

उसी समय पीपलाज माता ने भविष्यवाणी की कि आसोज सुदी 8 व 9, चैत्र सुदी 8 व 9 को (कुल देवी) पीपलाज माता यानी ड्योड़ी माताजी को पूजे उस समय नव नेवज से पूजना बताया । नव नेवज इस प्रकार है। (1) खाजा, (2) लाडू, (3) सांकली, (4) लापसी, (5) चोखा (चावल), (6) गांठीया (8) भूजिया और नव्वा पापड़ी। इससे पूजा करके नारियल बदारना। माताजी के कथनानुसार हाथीदांत का चुड़ा, जबलीया (कमीज या पोलका) घोड़ा गुगर माला, बलद कसावरन, बाजू–बंद, सब ही लाल पीला पालणो, हींचा की डोर, मकोड़ा, भांत सांकली (चेन), बिच्छिया बच्चा दांता की मेखा अपनी घर की नहीं होवे पीहर से आवे तो दोष नहीं। नागौर के भेरूजी को वैशाख माह सुद 14 कुलथ, बाकला से पूजते और बैसाखी सुदी 15 को चूरमा बाटी से पूजना, पहला गर्भ रहने पर 6 माह में आपकी बेण सुवासणी का खोल्या में (गोद) कतरणी (कैची) सु काचरीया करके उसके बराबर चांदी तोल देणी। पहले पुत्र होने पर 5 सेर तेल व लड़की होने पर 2 1/2 सैर तेल कलपना और नावन जलवान के दिन सवा पाव तेल की मारवाड़ दिशा में धार देना बाकी बचे तो तेल में भुज्या बनाकर बांट देना। ये सब करने पर सर्व बात का आनन्द होता है । नहीं करने पर परेशानियां आती है, यह बात सत्य है।

अन्य किवदन्ती के अनुसार नरदेवजी चौहान जो ससुराल से घर लौट रहे थे तो बबूल वृक्ष के नीचे भट्टारक जी श्री कनकसूरी जी उपदेश दे रहे थे । उपदेश से प्रभावित होकर उन्होने जैन धर्म स्वीकार किया और उनकी सन्ताने बोलिया कहलायी जो कालान्तर में बोल्या (बूंलिया) हो गई और इनकी (नरदेवजी) की वंशावली निम्न प्रकार से है– (1) नरदेवजी, (2) हेमराज, (3) देवदत्तजी, (4) देवधरजी, (5) समरजी, (6) गोहालणजी, (7) लखूजी, (8) पदमजी, (9) झाझणजी, (10) गजसी, (11) नरसी, (12) दोलाजी (13) करमजी, (14) पुनाजी (15) हेमाजी, (16) नाथाजी, (17) नगराजजी, (18) बनवीरजी, (19) हरखचंदजी, (20) देवदत्तजी, (21) कुंवरपालजी, (22) तालाजी, (23) भल्लाजी, (24) शार्दुलजी, (25) समरथजी, (26) करमाजी, (27) बनाजी, (28) जावाजी, (29) गल्लाजी, (30) नानुजी, (31) शम्भुजी, (32) लखमजी, (33) टोडरमलजी, (34) छाजूजी, (35) खेताजी, (36) पदमाजी, (37) निहालचंदजी, (38) जसपालजी और (39) सुल्तानजी हुए। कुछ परिवार शासकों के साथ जुडे रहे और कुछ परिवार उच्च श्रेणी के

व्यापार करते हुए शासकों के साथ जुड़ सम्मान प्राप्त करते रहे, बोल्या परिवार धर्म प्रेमी व दानशीलता के लिए विख्यात रहे जिसका कुछ अंश पौराणिक ग्रन्थ के अनुसार निम्न है :

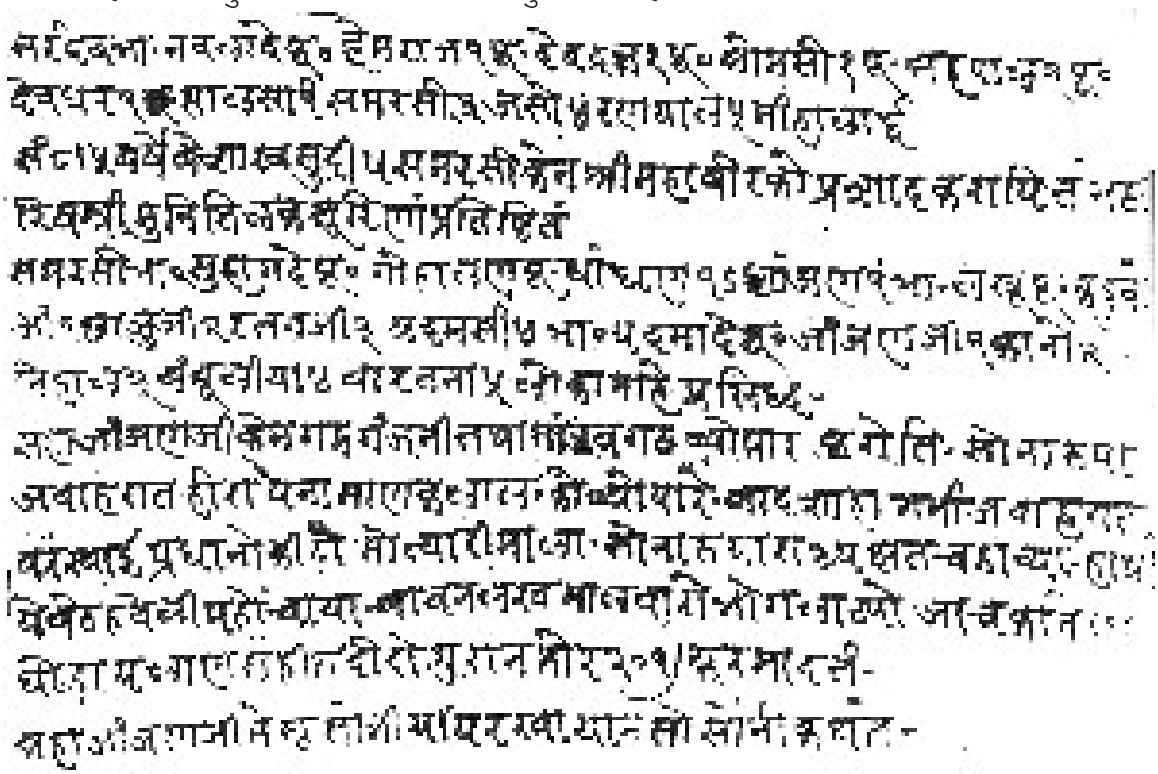

ख्यात के अनुसार बूली या बूंली या बौंली ग्राम छोडने के उपरान्त यह परिवार सम्पूर्ण भारत में फैल गये जिसमें प्रमुख रूप से देहली, रणथम्भोर, औरंगाबाद, मैसूर, सिलोल, चित्रकूट, (चित्तौड़), कोटा, मांडलगढ़ आदि स्थान प्रमुख रहे।

मेवाड़ राज्य स्वतन्त्रता प्रेमी रहा और स्वतन्त्रता के लिए बलिदान दिये है । जहाँ मेवाड़ की प्रजा शूरवीरता के लिए प्रसिद्ध है एवं धर्मप्रिय रही है। इसी कड़ी के आधार पर बोल्या परिवार के सदस्य श्री लखमसी चित्तौड़ में प्रधानमन्त्री रहे, उस समय सं. 1225 मगसर विद 5 के दिन महावीर स्वामी का मन्दिर निर्माण करा 25 लाख रूपया खर्च किया। सं. 1331 में बादशाह अल्लाउद्धीन खिलजी ने चित्तौड़ पर घेरा डाला और भंयकर युद्ध हुआ, जिसमें बोल्या परिवार की 13 पीढ़ी काम आई, जिसका पौराणिक अंश निम्न प्रकार है :

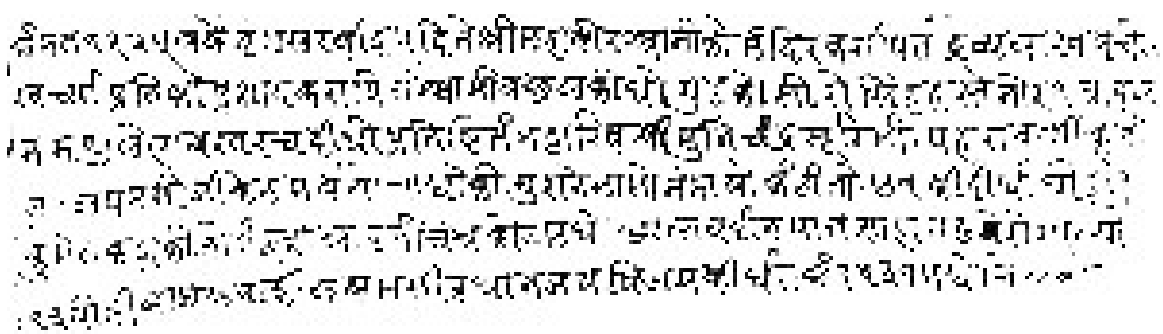

लखमती ने हार नहीं मानी, विजय हासिल की। अपने भाईयों का अंत वो बर्दाश्त नहीं कर सके, अन्त में चित्तौड़ छोड़कर अपने परिवार के साथ सतखण्डा निवास करने लगे।

रणथम्भौर में बोल्या परिवार के टोडरमल जी हुए, इन्होने अपनी दानशीलता के कारण पर्याप्त ख्याति अर्जित की । टोडरमलजी ने रणथंभोर में प्रसिद्ध गणपति का मंदिर निर्मित करा मूर्ति स्थापित की। मंदिर की प्रतिष्ठा के अवसर उन्होने बावनी की, टोडरमलजी के न तो कोई बहिन थी न कोई बेटी। अतः उन्होने रणथंभोर में 108 ब्राह्मण कन्याओं को अपनी बहिन बेटी मानकर उनको एक ही चँवरी पर विवाह करवाया। सभी जामाताओं को एक वर्ष तक अपने यहाँ अतिथि के रूप में रखने के बाद उन्हें गौना देकर विदा किया।

लखमसी के पश्चात् छाजूजी महाराणा सांगा की चाकरी करने लगे। राणाजी ने छाजूजी को काफी सम्मान दिया। छाजूजी भी अपने भाइयों की तरह दयालु, धर्मप्रेमी व दानवीर थे। छाजूजी द्वारा चित्तौड़गढ़ पर हवेली, जलाशय व धर्मशाला बनवाने का उल्लेख है, छाजूजी की हवेली की जगह आजकल चारभुजा जी का मन्दिर बना हुआ है।

छाजूजी के बाद खेताजी–पद्माजी और निहालचंदजी हुए। निहालचन्दजी महाराणा उदयसिंह के प्रधान (मंत्री) पद पर प्रतिष्ठित रहे। सं. 1610 में महाराणा उदयसिंहजी को अपनी हवेली पर आमंत्रित कर गोठ देने का श्रेय प्राप्त किया सं. 1612 में उदयसागर की नींव डाली गई और इस तालाब का निर्माण प्रधान निहाल चन्द्रजी के काल में पूरा हुआ।

पदमाजी के पुत्र श्री जसपालजी और जसपालजी के पुत्र श्री सुल्तानजी हुए। उस समय चित्तौड़ पर मुगलों के लगातार आक्रमण होते रहे, युद्ध में बोल्या परिवार के कई सदस्य शहीद हुए। सुल्तानजी किसी तरह बच निकले और संवत 1602 में अपने परिवार सहित ''पुर'' भीलवाड़ा जा बसे। पौराणिक ग्रंथ के अनुसार सुल्तानजी की कविता यहाँ दी जा रही है। इसके पहले भी वगताजी रणथंभोर से पुर व्यापार करते थे। उन्होनें गिरनार की यात्रा की, गिरनार से लौटते हुए उन्होनें पुर में चैत्यालय मंदिर सं. 1232 में बनवाया, जिसका कुछ अंश पौराणिक ग्रंथ के आधार पर यहाँ दर्शाया जा रहा है।

रंगोजी :

सुल्तानजी के पुत्र रंगोजी बोल्या हुए जो पुनः महाराणा अमरसिंह जी (बड़े) की सेवा में आये । बादशाह जहाँगीर और राणा अमरसिंह के मध्य सम्पन्न हुई, सम्मानजनक संधि के **प्रमुख सूत्रधार श्री रंगोजी बोल्या** ही थे। रंगोजी की इस सेवा के बदले राणा अमरसिंह ने उन्हें पुनः प्रधान का पद सौंपा । हाथी पालकी और अक्षत मोतिया से सम्मानित किया गया। उन्हें 4, गांवों की जागीरी के पट्टे दिये गए, जो निम्न है :–

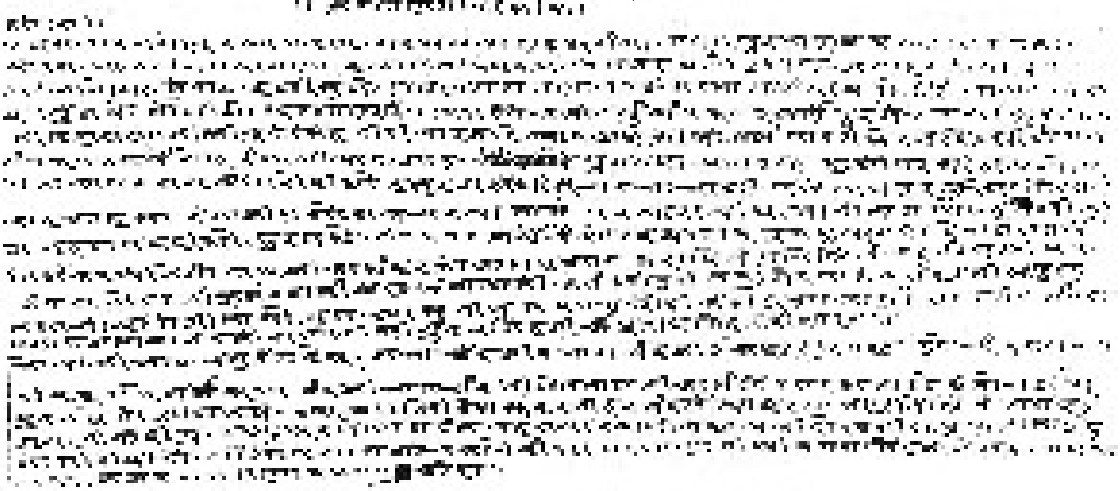

(1) भानपुरा, (2) काणोली, (3) मेवदा और (4) जामुणा जिनके पट्टे इस वंश वाले के पास अभी भी मौजूद है। इसका वृतान्त आगे अलग से बताया गया है, रंगोजी ने उदयपुर में घुमटी वाली छतरी अपनी हवेली ऊपर बनाई। इस प्रकार की घुमटी वाली छतरी किसी हवेली पर बनाने का अधिकार महाराणा सा. की ओर से किसी विशेष व्यक्ति को ही दिया जाता था। रंगोजी को यह सम्मान मिला। यह हवेली कालान्तर में महाराज श्री सूरतसिंह जी को दे दी गई। हवेली में अब भी स्मृति सूचक एक शिलालेख स्थित कहा जाता है। रंगोजी पर्याप्त ख्याति प्राप्त व्यक्ति थे तथा साथ में धर्म प्रेमी व दानवीर भी थे। अपने जीवन में उन्होने एक–एक लाख प्रसाव के तीन दान किये। सं. 1719 में इन्होने ''पुर'' में भगवान का भव्य मंदिर बनाया, मूर्ति की प्रतिष्ठा सं. 1799 में की गई और तीन दान भी किये। रंगोजी के भाई पंचाण थे। जिनके वंशज पंचावत कहलाते है। आपके 5 पुत्र हुए (1) चोरवा जी, (2) रेखाजी, (3) राजूजी, (4) श्यामजी और (5) पृथ्वीराजजी।

चौखाजी :

रंगोजी के पाटवी पुत्र थे अपने पिता की विद्यमानता में ही मेवाड़ की ओर से दिल्ली में वकील नियुक्त कर भेजे गये थे। चौखाजी ने अपने भोजग, चारण, भेरूदान (बड़वा) और एक नटनी को , जिसने गोकणेश्वर की दह (हद) पर बरत बांधकर उस पर नृत्य करते हुए पार किया था – एक एक लाख प्रसाव का दान दिया।

महाराजा करणसिंह जी ने महाराज गरीबदास (महाराणा करणसिंह जी के छोटे पुत्र) से नाराज होकर उन्हें मेवाड़ से निर्वासित कर दिया था। गरीबदास दिल्ली जाकर बादशाह की चाकरी करने लगे। उन्हें 52 गाँवों के साथ उणियारा का पट्टा मिला। पट्टा पाकर वे पुनः उदयपुर आये और उणियारा में शासन प्रबन्ध हेतु उन्होने महाराणाजी से चौखाजी को मांग लिया। उनके छोटे पुत्र करणजी का वहीं देहान्त हुआ। सं. 1726 वि. भादवा विद 8 सोमवार को उनकी पत्नी कमला देवी करणजी के साथ सती हुई। जिनके स्मारक स्वरूप एक छतरी का निर्माण करवा कर वैसाख सुदि 13, रविवार सं. 1733 को चौखाजी के चौथे बेटे सूरजमल ने उसकी प्रतिष्ठा करवाई । छतरी व शिलालेख उणियारे में छपनजी क तालाब के पास मौजूद है। सूरजमलजी के पेट और कंठ में जन्म से ही सर्प लिपटा हुआ था, ऐसा ख्यात में लिखा है। दियाडी के दिन सूजा (सूरजमल) का आज भी कुल में पूजन किया जाता है। सूरजमलजी का देहान्त उणियारे में हुआ।

रंगोजी के पुत्रों में चौखाजी के अतिरिक्त रेखाजी, राजूजी, श्यामजी और पृथ्वीराज चार और भी पुत्र थे। चौखाजी के वंशज गंगापुर और पुर में विद्यमान है। रेखाजी के गंगरार में। राजूजी के वंशज भी उदयपुर और पुर में रहते थे। श्यामजी के वंशज जावद और रामपुरा में और पृथ्वीराजजी के वंशज लाब्या में रह रहे है। राजू जी के वंशजों में रूद्धभाणजी और सरदारसिंह जी फौजदार के पद पर नियुक्त रहे।

चौखाजी के पाँच पुत्र थे। प्रथम सभाचन्द्र जी निर्वंश रहे। द्वितीय रामभाणजी, उसके वंशज राजावत कहलाते है। तृतीय उदयचंदजी, जिसके वंशज धनेर्या ग्राम में निवासित है। चतुर्थ सूरजमल और पाँचवे करणजी ।

सूरजमल के दो बेटे कानजी और मनजी थे। कानजी के दो पुत्र अनोपजी और कुशलाजी हुए।

अनोपजी :

अनोपजी का जन्म स. 1753 काती सुद 1 को हुआ। महाराणा श्री संग्रामसिंह जी (द्वितीय) ने इनको और धाय भाई देवजी को सरकारी काम के लिए दिल्ली भेजा । आपको महाराणाजी ने कोठार व रसोड़े का कार्य भार सौपा। इसके पश्चात् आप कपासन वगैरा कई परगनों में हाकिम रहे। कपासन प्रान्त में इन्होने एक ग्राम बसाया जो इनके नाम से ''अनोपपुरा'' कहलाता है। पोटला गांव में भी एक तालाब बनाया। अनोपपुरा इनके रहने की जगह हाथी के कुम्हाले लगे हुए है। सं. 1883 में अनोप जी ने अपने पुत्र श्री मोतीराम जी के विवाह पर महाराणा श्री जगतसिंह की पदरावणीं की जिस पर करीब 40 हजार रूपया खर्च हुआ। इसके अलावा इन्होने पुर गांव में बाग बावड़ी एवं भगवान नेमिनाथ मंदिर का जिर्णोद्धार कर नया सभामण्डप बनवाया और दूसरी मूर्ति स्थापित कर संत्र 1798 वैसाख सुदी 4 को प्रतिष्ठा कराई, जिसका लेख मूर्ति के नीचे खुदा हुआ है जो इस प्रकार से है–

''सं. 1768 वर्ष शाके 1663 प्रवर्तमाने वैसाख शुक्ल पक्षे 4 कुज वासरे श्री विजय गच्छे मट्टारखजी श्री रतन सागर जी, सुरेन्द्र जी आचार्य जी तपदान सागर सुर्येन्द्र जी बुल्या गोत्रे साहजी श्री कान्हजी भार्या हीरादे तत्पुत्र अनोपसिंह तत्पुत्र मानसिंह श्री नेमीनाथ स्वामी प्रतिष्ठा करापित्ं म। पौराणिक ग्रन्थ का अंश भी दर्शाया जा रहा है।

इन्होंने अपनी बावड़ी पर मंगलेश्वर जी का मन्दिर बनाया इनकी हवेली ''पुर'' में महलों के नाम से जानी जाती है जो आज भी जीर्ण–शीर्ण हालत में देखी जा सकती है। उनकी मृत्यु पिछोला नाव की सैर करते समय नाव के डूब जाने से हुई, इनके पुत्र मोतीराम जी ने उनकी स्मृति में एक छतरी का निर्माण कराया ।

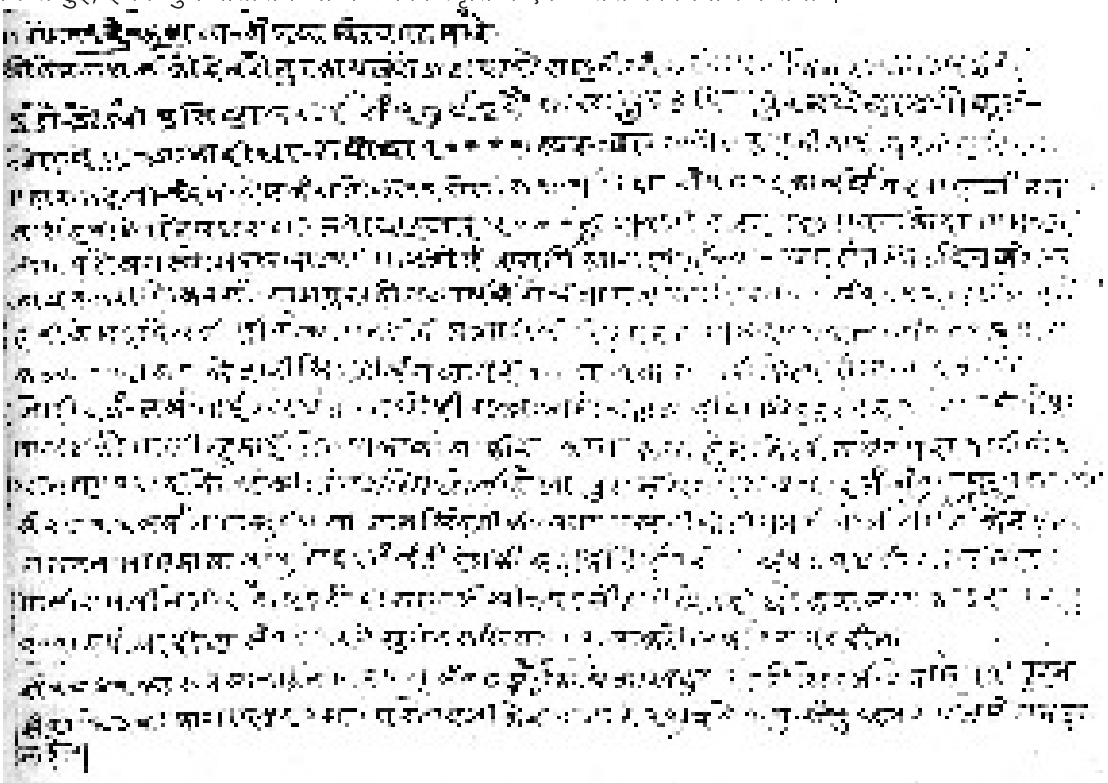

इनके अनुज कुशलाजी ने उदयपुर नगर में प्रसिद्ध कुशलपोल (जो अब कोलपोल के नाम से जाना जाता है।) का निर्माण करावाया।

अनोपजी के मोतीरामजी, मानसिंहजी और मोजीरामजी तीन पुत्र हुए। मानसिंह के वंशज पुर में निवसित है। इनकी जागीर में रंगोजी की जागीर के गांवों में से दो गांव मेवदा और कोणोली रहे।

मोतीराम जी :

मोतीरामजी का जन्म सं. 1783 श्रावण सुदी 2 मंगलवार को हुआ। मोतीरामजी ने सं. 1819 में कसारों की ओल, उदयपुर में ऋषभदेवजी का मन्दिर बनवाया। आबूजी का संघ निकाला। बाग–बावड़ियों का निर्माण करवाया। इसी वर्ष सं. 1819 में उन्हे महाराणा अरिसिंहजी ने प्रधान पद पर नियुक्ति किया जिस पर वे सं. 1822 तक रहे। सं. 1822 वि. में पुनः इसी पद पर उनकी नियुक्ति की गई। इन्होंने तीन बार जाति भोज (चोके का भोज) दिया जिसमें 275 मन शक्कर व्यय हुई। कसारो की ओल, उदयपुर में निर्मित ऋषभदेव जी के मन्दिर का प्रतिमा लेख आगे दिया जा रहा है ।

सं. 1826 में साह मोतीराम जी पर विपत्ति आ पड़ी। महाराणा ने उनसे एक लाख रूपये का रूक्का कराया वह धन उन्होने विसना और महादेव नामक पंडितों को भरणा में दिये थे। कुछ रूपये उन्होंने अदा किये। 15000/– रू.

छोड़ दिये गये। पर शेष वे जमा न करा सके। थोड़े दिनों बाद इसी वर्ष उनका देहान्त हो गया।

उनके पुत्र एकलिंगदासजी इस समय आयु में छोटे थे। दो वर्ष और उदयपुर में रहकर वह बनेड़ा चले गये। शाह मोतीरामजी का करीयावर भी बनेड़ा में ही किया गया। सं. 1829 में रावत भीमसिंह के निवेदन पर महाराणाजी ने रूक्के के जो रूपये पंड़ितो का देने बाकी थे – उनकी छूट कर दी। महाराणा हमीरसिंह जी की आज्ञा से वंदगी का परवाना एगलिंगदासजी के नाम बनेड़ा भेजा गया – पर उस पर एकलिंगदास जी को विश्वास नहीं हुआ। सं. 1833 में पुनः स्वामी भक्त चाकर भेज कर एकलिंगदासजी बुलवाये गये और वे नहीं आये। सं. 1834 में पुनः परवाना भेजा गया। इस पर भी एकलिंगदासजी के नहीं लौटने पर मोतीराम के अनुज और एकलिंगदासजी के काका मोजीराम जी को राज्य सेवा में नियुक्त कर दिये गये। हाथीपोल और दिल्ली दरवाजा उदयपुर के बीच शहर कोट के पास अपनी निजी बाड़ी पर बावड़ी बनाई जो बाड़ी के खालसे होकर अब बस्तीराम जी के नाम से और बावड़ी मोतीरामजी के नाम से मशहूर है।

मोजीरामजी :

मोजीरामजी का जन्म सं. 1791 मगसर विद 5 सोमवार को उदयपुर में हुआ था।

मोजीरामजी तीन वर्ष तक महाराणा हमीरसिंह जी और भीमसिंह जी के शासनकाल में मंत्री (प्रधान) पद पर सुशोभित रहे। उन्होंने फौजदार के पद पर भी सेवा की। सं. 1822 में फौज लेकर वह मांडलगढ़ भेजे गये थे। इस प्रकार के कई अभियानो में वे अग्रणी रहे, जिनसे संबंधित परवाने इसके वंशजो के पास बताये जाते है। मांडलगढ़ के उक्त अभियान से संबंधित परवाने में महाराणा अरीसिंहजी का पाँच ठाकुरों को लेकर मांडलगढ़ जाने, रहने और लौटने संबंधी निर्देश है। उसी वर्ष एक आदेश में मारवाड़ की सीमा में खोड़ गांव पहुँचने का आदेश देते हुए महाराणा ने निर्देश दिया है, कि पाली को फोजदार खोड़ थी, कजियो करे तो थूं भी करजे – डेरो खोड राख्ज्ये। सं. 1824 कार्तिक मास में एक परवाने मे उन्हें जोधपुर महाराजा विजैसिंह जी के आगमन पर 4 सरदारों को भेजने और अवकाश हो तो 500 सवार लेकर दीपमालिका के दिन सुबह ही उपस्थित होने का निर्देश है। इसी वर्ष मगसर विद 7 के अन्य परवानो में उन्हें गोड़वाड़ के घाटे में पटायतों की जमीयत और बेजा पटायतों की सरबंदी के लिए तीन चार हजार आदमी नौकर रखकर उनके साथ चढ़ाई करने का निर्देश है। सं. 1824 पौष सुद 12, के परवाने में समस्त सरदारो सहित मेहता अगर जी के पास माडलगढ़ पहुँचने और बाकी समाचार (निर्देश) धायभाई रूपा और मोजीरामजी से प्राप्त करने का निर्देश दिया गया है।

मोजीरामजी माण्डलगढ़ में सेनापति के पद पर रहे और उन्हें महाराणा सा. द्वारा जागीरी प्रदान की जिसके पट्टे की नकल इसी पुस्तक में समावेश किये गये है। राजस्थान बनने से पूर्व तक उनकी संतान के पास रही। मोजीरामजी की संतान में गंगारामजी, नाथजी, जगजी, जोधमानजी, रिड़मलजी हुए उसमें जोधमानजी के पुत्र मथुरादासजी ने उदयपुर आकर पंचायती नोहरे के पास अपनी हवेली बनाई। इस हवेली का कुछ भाग ओसवाल बड़े साजन पंचायती नोहरे के नाम से जाना जाता है जहाँ वर्तमान में कोयले की टाल है वह बाड़ा कहलाता था जिसे पंचायती नोहरे के विस्तार हेतु ओसवाल बड़े साजन सभा को भेट किया गया। मथुरादासजी के पुत्र वच्छराज जी को मेवाड़ सरकार द्वारा काफी सम्मान देकर सियाखेड़ी की जागीर बक्षी तथा माण्डलगढ़ में भी जमीन बक्षी जिनके पट्टे मौजूद है।

महाराणा सा. द्वारा श्रीनाथजी की हवेली के पास नई हवेली बनवाई जो अब तक मौजूद है। वच्छराजजी व उनके पुत्र खेमराज व उनके पुत्र छगनलालजी महाराणा सा. के पास कारखाना जाल में हाकिम रहे । खेमराजजी के भाई केसरीचन्दजी जिला हाकीम खमनोर व हूरड़ा में रहे। मोजीरामजी का देहान्त सं. 1838 जेठ वीद 1 को उदयपुर में हुआ तथा उनके साथ उनकी पत्नी साकर बाई आयड में सती हुई, चबूतरा बना हुआ बताते है। चंद परवानो की नकल नीचे दी जा रही है :–

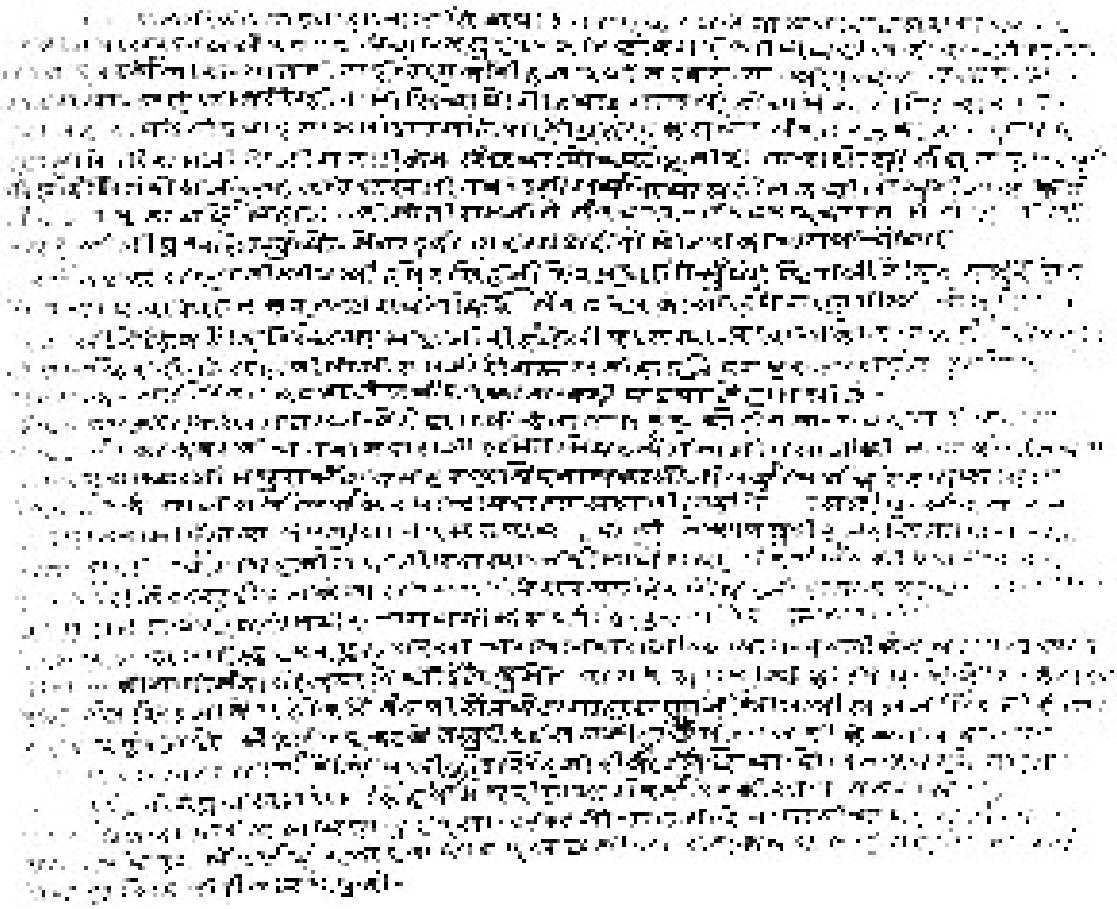

चन्द परवानो की नकलें निम्नलिखित दी जाती हैं :–

सं. 1823 'अप्रं उठारो काम सुलझीयो होवे तो उठारो जावतो करें हजूर आवजो ने थारे जेजे हवै तो इत्रा सिरदरा .....सिताब हजुर मोकलजो

विगत .....

राव शुभकरण (विजोलिया) राणा जालमसिंह सीसोधा विजयसिंह और कुंवर प्रताप सिंह (आमेट) उठारो अवकाश होवे तो सवार 500 जावद मेले न सिताब दीवाली रे प्रभात हजुर आय पगे लागजो।

सं. 1823 पोष सुदी 12 का गोड़वाड़ रा समस्त ठाकरा के नामः–

अप्रं साह मोजी राम हे फोज ले विदा कीदो है सो पटा परवाने साथ सामान ले जाय सामल है जो ढ़ील करों मती प्रवानगी सा मोजी राम बोल्या।

सं. 1823 वैशाख सुदी दशम का तोहे निपट सरणो जाणे उठीने ने मेलाणों है सो धरती रो निपट बंदोबस्त किजे अबारूरा सबूब माफक रजपूतां रो दिल हाथ राखजे.... ।

सं. 1824 का आसोज सुदी 6 भोमें

अप्रं महाराज श्री विजय सिंह जी री आवादानी श्री नाथ जी दुबारे आवारी सुपजे है सो घारोणा राठोड़ वीरमदे तथा देसुरी रा सोलंकी है तो हजुर मोकलजे ने चाणोद राठौर विसन सिंह तथा दूजा साथ हे तो फौजबन्दी राखजे ने पाछे थी हुकम आवे ज्यूं कीजे प्रवानगी साह मोजी राम जी बोल्या।

सं 1824 मगसर विद 7 गुरे –

अप्रं गोड़वाड़ री दरोवसत फौज सारी आछी साबती थी प्रवानादिसट घाटे चढजे परायतांरी जमीन है सो परायतं री जठा सिवाय लोग सरवंदी राखजे आदमी हजार तीन चार सुदी साथ ले घाटे चढ़जे।

अप्रं गोड़वाड़ तोहे सावधरमी जाणे भलाई है एकाएक नकस ऊपरे खपजे वगेरा है जिसके हासीये पर खासश्री हस्ताक्षरो से लिखा बक्षा के 'तूं खात्र जमा राखे ने बुंदगी कीजे थारी

कोई सांची झूठी केगा तो नार काडया बना ओलंबो दांतो माने श्री एकलिंगजी री आण कदी मन में संदे लावे मत ने थने परगणे। गोड़ वाड़ रो भलायो है सो सामधरमी वे जाने दिजीये सा दीजे ने वंदगी में कसर राखे जाने सजा दीजे म्हारो हुक्कम हे थुं या जाणजे सो हुं तो तीरे ऊपर हुं खरची लोग रो विचार राखे मत थारी दा आवे जीनें तो दीजे ने दाय तो दाय आवे जीरो उरो लीजे । इससे जाहिर होता है कि श्री हुजुर महाराणा का किस कदर भरोसा खवन्दी थी ।

एकलिंगदासजी :

मोतीरामजी के पुत्र थे उनका जन्म सं. 1814 जेठ सुदी 2 बुधवार को हुआ यह सं. 1834 से 1837 तक प्रधान पद पर रहे इसके उपरान्त भी तीन बार इनके नाम इस पद को संभालने हेतु आदेश हुए पर उन्होंने इंकार कर दिया। सं. 1846 में वे फोज लेकर फलीचड़ा गांव के चौहानों पर चढ़ाई की और फलीचढ़ा पर अधिकार कर लिया। इस हमले में उनके साथ ''कड़क बजली नाम की तोप थी''। सं. 1854 में यह व्यापारियों व भले आदमियों को उदयपुर लाकर बसाने के लिए डूंगरपुर भेजे गये। सं. 1854 में थाणा के ठाकुर को रावत जोरावरसिंह का ठाणा पर अधिकार करने के लिए भेजा गया। सं. 1864 में नाथद्वारा के ठाकुरजी को जोधपुर स्थानान्तरण के समाचार सुनकर महाराणा ने एकलिंगदासजी को नाथद्वारा भेजा । नाथद्वारा भेजने का कारण होलकर सदाशिव राव के लूटपाट हेतु आने की सूचना थी । इस अवसर पर श्रीनाथजी की मूर्ति को घसियार में स्थानान्तरित कर दिया तब एकलिंगदासजी ठाकुर जी की सेवा में रहे। सं. 1877 में कांकरोली जी के गुसाईजी को राजतिलक देने के अवसर पर महाराणा के प्रतिनिधि के रूप में एकलिंगदासजी को भेजा। सं. 1878 में जयपुर तिलक को लेकर भेजे गये और पट्टे में चार गांव प्राप्त किये। मेवदा और काणोली, सादड़ी और अनोपपुरा। एकलिंगदासजी ने पुर में नीलकण्ठ महादेव के मन्दिर के पास 5 बीघा भूमि में लगा बाग पुरस्कार स्वरूप प्राप्त किया। माण्डलगढ़ में निवासित अपने बन्धुओं को खालसे हुए भूमि पुनः प्राप्त की। अपने निवासी की हवेली के 66 साल का किराया और गहणावट के दो गाँव भावलिया और खरड़ा चौथी पांती की शर्त पर नाथद्वारा गुसाई जी महाराज को भेंट की। सं. 1900 मे एकलिंगदासजी का लम्बी आयु में देहान्त 87 वर्ष की उम्र में हुआ ये आखिर वक्त तक हुक्म मुजब चाकरी करते रहे। महाराणा हमीर सिंह जी, भीम सिंह जी, जवान सिंह जी, सरदार सिंह जी और स्वरूप सिंह जी का इन पर पूरा पूरा भरोसा था उस वक्त के कागजात से पता चलता है कि सब सरदार उमराव तथा महराठा अफसर इनकी इज्जत व सम्मान करते थे और सबके साथ इनका बहुत प्रेम था। उनकी जागीर में इनके पिताजी मोतीरामजी की जागीर के गांव थे जिनमें से संवत 1990 में मेवदा के बजाय रूपाखेड़ी बक्षी इनके छोटे भाई भोयो का खेड़ा अलग था। सबूत के तौर पर कुठ पत्रावली बक्षे जारी है।

महाराणा हमीरसिंह जी ने सं. 1833 पोष सुद 4 सोमें इनके पिता की स्वामीभक्ति से प्रसन्न होकर उनको बनेड़े–2 परवाना बक्षाया। थे दरबारा सामधरमी हो थारा भाई बेटा हे ले जमाखत्र राखे हजुर आवजो।

इसी साल फागण सुदी 3 श्री चान्द जी बावजी ने परवाना बक्षा :– थे दरबारा छोरू हो घणी जमाखात्र राखे थारों कबीलो जे आवजो थे कणी वात री बाइजी राजश्री राखो मती थारो कबीलो मो समाणो है घणी थारा जतन करेगा इसके कुछ ही अरसे बाद सं. 1834 भादवा वदी 6 सोमे चिन्ता प्रधाना बक्षाया।

सं. 1846 में अरबियो की फोज और कटक विजली इनके पास भेजी गई। इस साल कानोड़ की जमीन का और फलीचड़ा चैहान जोरावर सिंह से खाली कराने का और पीप्लया चकड़ी खालसे करने का हुक्म हुआ सो तामील कराई।

सं. 1858 में फौज लेकर नाथद्वारा पहुँचे और जसवन्त राव हुल्कर के आक्रमण को रोक श्री ठाकुर जी को नाथद्वारा से उदयपुर पधराये। स्वस्ति श्री राज छत्रसालजी सुं मारो जुहार बंचे, अप्रं श्री दुवारे जाबाता सारूं सहा एकलिंग दास जी बोल्या हे मेल्या है सो उठे कोई काम उपजेने बुलावे तो पांच आदमी तथा डीला बुलावे तो जणी घणी पदारेगा सं. 1864 वैशाख सुदी 3 गुरे।

महाराणा सिंह श्री जवान सिंह जी सं. 1881 में अजमेर लार्ड विलियम बेंटिक से मुलाकात करने गए तथा संवत 1890 में गया जी का तीर्थ करने गए तव निजी हुक्म बक्षायो ''समाचार जाणजो में राजी कुसी हों जाबातो रखावजो।

स्वास्ति श्री हजूरो हूकम हा एकलिंगदासजी है अप्रंच थारी अरज आई समाचार मालुम वा सो ठीक है उठे ''चौकी पेरा रो सारी वातसु जाबतो रखावजू समाचार रूका सु जाणजो उठे श्री देव कारज खदाबन्द प्रमाणे मै उठे'' वां जणी प्रमाणे पूजा बलिदान करावजो श्री खड़ग जी सदा प्रमाणे पदरावजो अटारी कुसी राखजो'', इससे जाहिर है कि पीछे का सारा इंतजाम उनके भरोसे रखा गया था।

एकलिंगदासजी के पुत्र भगवानदासजी, भगवानदासजी के पुत्र ज्ञानमल जी एवं ज्ञानमल जी के पुत्र लक्ष्मीलाल जी को पुर से गोद लाये।

एकलिंगदासजी के पुत्र भगवानदासजी हुए जो सं. 1890 में महाराणा जवानसिंह जी के साथ तीर्थयात्रा में गये। इसके अलावा बोल्या परिवार के श्री लक्ष्मीलाल जी व उनके पुत्र देवीलाल जी ने मेवाड़/राजस्थान सरकार में उच्च पद पर कार्य करते हेतु सेवाएँ दी । श्री मोतीलाल जी बोल्या, सिंघटवाड़ियों की सेहरी वाले उनके पुत्र रोशनलालजी हुए। श्री मोतीलालजी बोल्या ने मेवाड़ रियासत की तरफ से वकील रह कर मेवाड़ रियासत को सेवाएँ दी। श्री रोशनलाल जी बोल्या ने सरकारी उच्च पदों पर आसीन रखकर सरकार की सेवा की। श्री देवीलालजी के पुत्र श्री कृष्णकुमार जी बोल्या भारत सरकार के उच्च आयकर आयुक्त रहे । इसी प्रकार श्री डूंगरसिंह जी बोल्या के सुपुत्र श्री हिम्मतसिंह जी बोल्या ने राज्य एवं केन्द्र सरकार के महत्वपूर्ण पदों पर रहकर सेवाएँ दी एवं सरकार द्वारा कई पारितोषिक प्राप्त किये। श्री कोमलसिंह जी बूंलिया राजस्थान सरकार के उच्चतम पद मुख्य अभियन्ता सिंचाई है। इस प्रकार बोल्या (बूंलिया) वंश के कई सदस्य कई महत्त्वपूर्ण पदों पर एवं व्यवसाय – उद्योग में प्रतिष्ठापित रहे हैं।

बोलिया वंशज के सपूत महाराणा कुम्भा से पूर्व के शासनकाल से लेकर महाराणा जी श्री स्वरूपसिंह जी के शासनकाल तक प्रधानमंत्री, सेनापति, हाकीम आदि महत्वपूर्ण पदों पर रहकर मेवाड़ रियासत व राजस्थान सरकार की सेवा करते रहे एवं वर्तमान में भी सेवा कर रहे है। यह सारी जानकारी ''गुरासा की पट्टावली'', ''ओसवाल जाति का इतिहास'', ''इतिहास की अमर बेल ओसवाल'' एवं शोध पत्रिका डॉ. ब्रजमोहन जावलिया के आधार पर लिया गया है ।

बादशाह जहाँगीर और महाराणा अमरसिंह की संधि के प्रमुख सूत्रधार

रंगोजी बोलिया

राजस्थान की भूमि सदा वीरभोग्या रही है और उसमें मेवाड़ का अपना विशिष्ट स्थान है। अपने स्वतन्त्र अस्तित्व के लिए सदा युद्धरत रहने वाले इस प्रदेश के स्वाभिमान को चूर्ण करने के लिए दूरस्थ विदेशी और पड़ौसी शक्तियों ने सैकड़ों वर्षो तक अथक प्रयास किये, परन्तु उन्हें कभी सफलता नहीं मिल पाई। मेवाड़ी वीरो के हाथो उन्हे सदा नाकों चने चबाने पड़े। कई अवसर तो ऐसे भी आये, जब इन पडौसी सुल्तानों को मेवाड़ के कारागार में निवास भी करना पड़ा।

दिल्ली की मुगलिया सल्तनत ने भी अपने प्रारंभ से ही अपार शक्ति और कूटनीति के प्रयोग की स्वतन्त्रता के अपहरण के लिए किये परन्तु वे भी असफल ही रहे। बादशाह अकबर ने अपना समग्र जीवन इसी उद्देश्य की पूर्ति में लगाया। अपनी कूटनीति से उसने महाराणा के परिवार के अनेक सदस्यों और अन्य क्षत्रिय वीरों को भी स्वपक्ष में कर लिया। महाराणा उदयसिंह और प्रताप को अपने राजप्रसाद छोड़कर जंगलों की खाक छाननी पड़ी। फिर भी दिल्ली के शासन के आगे उन्होंने अपना सिर कभी नहीं झुकाया। यह महान् गौरव की बात थी परन्तु लगभग चार युग के निरन्तर संघर्ष के उपरान्त परिस्थितियों ने इस वीर जाति और इसके नेता महाराणा अमरसिंह को बादशाह जहांगीर से कथित सम्मानजनक संधि के माध्यम से आंशिक रूप से अपनी स्वतन्त्रता खोने को बाध्यकर दिया।

कहा जाता है कि इस संधि से पूर्व भी हताश महाराणा अमरसिंह ने अपनी निरीह प्रजा को मुगलों द्वारा अध्याधिक त्रस्त किया जाता देखकर उनके आगे झुकने का निश्चय किया था परन्तु मेवाड़ के क्षात्रधर्म और स्वतन्त्र, प्रेम को सम्मान की दृष्टि से देखने वाले खानखाना की सम्मति पर उन्हें अपना विचार त्यागना पड़ा।[1] इस अनुश्रुति में सत्य का अंश कितना है, यह अनुमान लगाना कठिन है। इसमें कोई संदेह नहीं कि महाराणा को अपने आश्रय स्थल के रूप में अवशिष्ट अंतिम–स्थल चावंड के भी शत्रु के हाथों में चले जाने एवं खुर्रम के द्वारा मेवाड़ की जनता के साथ किये जा रहे अत्याचारों ने बाध्य कर दिया था कि वे मुगलिया सल्तनत से कोई सम्मानपूर्ण समझौता कर अपने कुल की लाज तथा अपना प्रजा के जीवन रक्षा करें। खानखाना को लिखे गये पत्र को हम इसी उद्देश्य की पूर्ति हेतु किये गये प्रयास को प्रथम कह सकते हैं।

समझौते के लिए पहल केवल मेवाड़ की ही ओर से की जाती रही हो, ऐसी बात नहीं है। उधर मुगलिया सल्तनत भी मेवाड़ में अपनी सेनायें बनाये रखने में असमर्थ हो चुकी थी। एक–एक करके अपने चुनिन्दा सरदारों को मेवाड़ में मरते देखकर तथा अपने खजाने का अधिकांश भाग मेवाड़ में अपने उद्देश्य की पूर्ति में रिक्त हुआ देखकर जहाँगीर भी किसी प्रकार महाराणा से सम्मानपूर्ण समझौता कर सकने की परिस्थितियों की प्रतिक्षा कर रहा था। खुर्रम के द्वारा अंतिम दिनों में प्रजा पर किये गये अत्याचार स्पष्टतः उनकी मेवाड़ में असफलता के सूचक थे। यदि महाराणा ने थोड़ा और धैर्य मेवाड़ के सामन्त अपना साहस न खो बैठते तो संभव था कि समझौते की पहल मुगलों को ही करनी पड़ती और महाराणा अपने स्वाभिमान और स्वतन्त्रता की रक्षा करने में और भी अधिक सफल होते।

मेवाड़ की इस चिन्तनीय अवस्था से हतोत्साहित होने वाले सामन्तों में सर्व प्रमुख झाला हरदास और पँवार शुभकर्ण का नाम आता है, जिन्होंने राजकुमार कर्ण को अपनी ओर मिला उसके माध्यम से महाराणा को तथा मुगल पक्षीय राय सुन्दरदास के माध्यम से शाहजादा खुर्रम को संधि के लिए तैयार किया । खुर्रम ने इसी सुन्दरदास तथा एक अन्य व्यक्ति शुक्रल्लाह के द्वारा बादशाह जहाँगीर को ये शुभ समाचार पहुँचाये और बादशाह ने तत्काल स्वीकृति भी दे दी।[3] बादशाह की स्वीकृति में इतनी त्वरा भी स्पष्ट करती है कि वह भी समझौते के लिए तैयार था। ऐसी परिस्थिति में जहांगीरनामा या तुजुके जहांगीरी में जहाँगीर द्वारा इसको अपने जीवन की सबसे बड़ी घटना मानना तथा अपने आपको सौभाग्यशाली घोषित करना उचित ही है क्योंकि उसी के शासन में ऐसी घटना घटी थी, लिए उसके पूर्वजों और उनसे भी पूर्व के

उदयपुर राज्य का इतिहास श्री गो. ही. ओझा–भाग–2, पृ. 493–94, महाराणा की और से पत्र के रूप में प्रेषित और खानखाना का उत्तर निम्न है :

महाराणा का दोहा

गोड़ कछाहा राठवड़, गोखा जोख करन्त।
कहजो खानांखान ने, बनचन हुआ फिरंत ।।1।।

खानखाना का उत्तर

धर रहसी रहसी धरम, खपजासी खुरसाण ।
अमर विशंभर ऊपरां, राखो निहचो राण।।

राणा ने खानखाना को पत्र लिखा होगा और सम्मानपूर्ण समझौते के लिये उसका योग चाहा होगा परन्तु उपर्युक्त दोहों में उनका पत्र व्यवहार हुआ होगा, यह उचित नहीं लगता। प्रथम दोहा किसी दूत के द्वारा भेजा गया मौखिक संदेश मात्र लगता है–पत्र की भाषा नहीं।

दिल्ली शासकों ने अपना खून–पसीना एक कर दिया था। परन्तु इसी विवरण में उसका यह लिखना कि उसके पुत्र ने राणा के साथ बड़ा कृपापूर्ण बर्ताव किया, राणा ने उसके पैर पकड़े तथा अपने दोषों के लिए क्षमा मांगी तो उसने उसे (राणा को) उठाकर छाती से लगा लिया।[5] इससे अधिक कुछ भी नहीं माना जा सकता कि यह वर्णन आत्मतुष्टि हेतु की गई आत्मश्लाघा के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है। यह विवरण दोनों पक्षों की संधि के लिए प्रबल आकांक्षाओं के सर्वथा विपरित है। महाराणा केवल अपने सरदारों की इच्छा के आगे झुका था, वह भी अनिच्छा से। ऐसी अवस्था में महाराणा का अपने पूर्वजों के बलिदान को विस्मृत कर इतनी दीन और अनाथ अवस्था में शाहजादे के कदमों पर पड़ कर क्षमायाचना करना कैसे संभव हो सकता है? अंत में संधि हुई।

इस घटना का विस्तृत विवरण केवल तुजुके जहांगीरी या जहांगीरनामें में मिलता है। मुंहता नैणसी की ख्यात जैसे ग्रन्थों में संकेत मात्र उपलब्ध है।[6] टाड कृत राजस्थान[7], वीर विनोद[8]

अथवा परवर्ती ऐतिहासिक पुस्तकों के लिए ये ही आधार रहे हैं और स्थानीय स्त्रोतों का उपयोग अद्यावधि नहीं के बराबर ही हुआ है। हाल ही में मुझे तीन ऐसे हस्तलिखित ग्रन्थ प्राप्त हुए है, जिनमें महाराणा अमरसिंह और जहांगीर के मध्य हुए इस समझौते में सूत्र तीन ऐसे हस्तलिखित ग्रन्थ प्राप्त हुए हैं, जिनमें महाराणा अमरसिंह और जहांगीर के मध्य हुए इस समझौते में सूत्र संचालन करने वाले रंगोजी बोल्या नामक एक सर्वथा नवीन व्यक्ति का एवं संधि की शर्तो के लिए रखे गए प्रारूप का उल्लेख है। इनमें से एक ग्रन्थ के अनुसार –

''मेवाड़ की प्रजा और महाराणाओं ने तीन युगों तक दिल्ली के बादशाहों से युद्ध कर अत्यन्त कष्टपूर्ण जीवन बिताया। दिल्ली की सेनायें भी सतत आक्रमणों के उपरान्त असफलताओं से निराश और परेशान थी। महाराणा अमरसिंह के सिंहासनारूढ़ होते होते तो मेवाड़ का अधिकतम भूभाग मुगलों के अधीन हो चुका था। महाराणा की राजसेवा में नियुक्त रंगोजी बोळिया मुगलों द्वारा कैद कर दिल्ली भेज दिये गये, जहां वे नवाब खानखाना की हिरासत में रखे गये। वहीं उन्होंने असाध्य ज्वर से ग्रस्त लखनऊ के नवाब (नाम नहीं दिया गया है) की किसी महात्मा से प्राप्त हरड़े से चिकित्सा की। कृतज्ञता ज्ञापन स्वरूप रंगोजी कारागार से निकाले जाकर नवाब के पारिवारिक अतिथि के रूप में रखे गये। नवाब के ही माध्यम से बादशाह जहांगीर से रंगोजी की भेंट हुई। (दूसरे ग्रन्थ के अनुसार रंगोजी मेवाड़ की और से ही दिल्ली भेजे गये थे।)

रंगोजी ने बादशाह को सलाह दी कि इधर उनका राजकोष रिक्त हुआ जा रहा है और उधर महाराणा भी कष्ट पूर्ण जीवन व्यतीत कर रहे हैं। ऐसी स्थिति में क्यों नहीं ऐसा कोई उपाय किया जाए कि राजकोष का अपव्यय रूके और महाराणा के कष्टों का भी अंत हो जाए। बादशाह ने अपनी जिद्द के अनुसार पुरानी रट लगायी कि महाराणा अपनी बेटियां हमें दें, तभी यह संभव है। रंगोजी के ऐसा समझाने पर कि यदि यह संभव होता तो इतने वर्षो तक युद्धरत रहकर कष्ट झेलने में हमें क्या आनन्द आता था, बादशाह ने अपनी निम्न चार शर्तो के साथ रंगोजी को महाराणा के पास भेजा –

(1) पाटवी कुमार बादशाह की चाकरी में जावें।[9] उसके साथ 500 सवार रहेंगे।[10]
(2) राज्य की ओर से मेवाड़ में एक मस्जिद बनवानी होगी।[11]
(3) हमारा एक काजी वहाँ रहेगा।[12]
(4) महाराणा को बादशाही फरमान झेलना होगा।

रंगोजी ने इन शर्तो को अपने स्वामी के सम्मान पर किसी भी प्रकार का आघात पहुँचाने वाला नहीं पाया। अतः दिल्ली से मेवाड़ आकर मगरों में आश्रित महाराणा के सामने उसने बादशाह की उपर्युक्त शर्ते रखी। सभी सामन्तों ने अपनी विकट परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए तथा इन शर्ते को स्वधर्म एवं राज्य पर किसी प्रकार से संकट लाने वाला न पाकर, उन्हें स्वीकार कर लिया और कुमार कर्णसिंह को बादशाही दरबार में दिल्ली भेजा। संधि की शर्ते निश्चित हो जाने पर मेवाड़ से शाही फौजें बाहर हटा दी गई।

---

2. उदयपुर राज्य का इतिहास–भाग 2–श्री गौ. ही. ओझा–पृ. 495.
3–4–5 जहांगीर नामा–हिन्दी अनुवाद–अनु. ब्रजरत्नदास (ना. प्र. सभा–काशी) (सं. 2014), पृ. 341–42.
6. मुँहता नैणसी री ख्यात–भाग 1 (राज. प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर), पृ. 24
7. Tod's & Annales and Antiqities of Rajasthan - Ed. Willinam Crook - 1920 - Vol. 1
8. वीर विनोद–कविराजा श्यामलदास–प्रकरण पंचम–पृ. 236–37.

बादशाह का फरमान आया। महाराणा ने इसे धोखा समझा, अतः मार्ग में दोनों और अपनी फौज का पूरा प्रबन्ध कर उदयपुर शहर और देबारी के मध्य स्थित गणेश टेकरी (आजकल जहां महाराणा भूपाल कालेज का भवन बना है, वही गणेश टेकरी कहलाती थी) जाकर बादशाही फरमान ग्रहण किया।

महाराणा ने रंगोजी को इस सेवा के उपलक्ष में प्रधान पद दिया, हाथी, पालखी, और मोतियों के आखों (अक्षत से सम्मानित) से सम्मानित किया तथा (1) मानपुरा (2) काणोली (3) मेवदा और (4) जामूणों गांव जागीर में दिये। नगर में गुमटी (गुम्बज = Dome) वाली हवेली बनवाकर दी गई, जैसा केवल विशिष्ट व्यक्तियों को ही रखने का अधिकार था। बादशाह जहांगीर की ओर से रंगोजी को 42 बीघा जमीन पुर गांव (जिला भीलवाड़ा) में दी गई।

रंगोजी ने प्रधान (मंत्री) पद पर रहकर मेंवाड़ के गांवों की सीमा का अंकन करवाया तथा जागीरदारों के गांवों की रेख भी निश्चित की।''

रंगोली के द्वारा इस संधि में रहे योग की पुष्टि एक अन्य हस्त लिखित ग्रन्थ में प्राप्त गीत से भी होती है, जो इस प्रकार है :—

(गीत साहा रंगोजी रो पातसाह रे राणाजी रे मेळ करायो जणी आंटा रो—)

पूरब पछम उतर दखण पण।
जरकस साह ने जगत जाणे।।
अवळ ने कवळ अभेळ हुतो न को।
रंगै मेळ कीयौ पतसाह राणे।।1।।
च्यार चक चर चलै चाक परजा चढ़े।
राह वे साह पतसाह रूठा।।
तीहारे मत सुरताण र तजड़हत।
दत्नी चत्रकोट सुख चेन दीठो।।2।।
बाप वो बाप अमरेस रो सामध्रमी।
साच री वात जुग च्यार साखी।।
जळाबंब होतो न को त्याग ही जायछो।
रंगे मेवाड़ री लाज राखी।।3।।
दीयै दुनियान आसीस वौहो दुंनी।
प्रतपे घणा दीहे राव बोळया।।
पालरा गिरां लग डीगरा पोढती।
मोगणी पुरख सुख चेन मेलया।।4।।

उपर्युक्त ग्रन्थों में प्राप्त विवरण तथा उनकी पुष्टि में यह गीत हमें इस संधि से सम्बन्धित तुजुके जहांगीर या इकबाल नामा जहांगीर में प्राप्त वर्णन पर पुनविचार का अवसर देता है। रंगोजी बोळया का कोई उल्लेख इन ग्रन्थों में मिलता, इसका कारण समझ में नहीं आता। यह अनुमान अवश्य लगाया जा सकता है कि महाराणा और खानखाना के आपसी व्यवहार विषयक अनुश्रति सत्य रही होगी और उसमें रंगोजी बोल्या ने मध्यसत का कार्य किया गया होगा। संधि के लिए उचित वातावरण तैयार करने और संधि कराने में भी रंगोजी बोल्या का अप्रत्यक्ष बहुत बड़ा हाथ रहा हो तो भी

---

9. एतिहासिक अन्य ग्रंथों में भी यही शर्त है। ओझा—उदयपुर राज्य का इतिहास भाग—2, पृ. 497।

10. प्रकाशित ऐतिहासिक ग्रन्थों में यह दूसरी शर्त है— उनमें 500 के स्थान पर 1000 सवारों का उल्लेख है।

11—12. तीसरी और चौथी शर्ते इन प्रकाशित ग्रन्थों में निम्न प्रकार है।

(1) महाराणा बादशाह के कभी मरम्मत नहीं की जायेगी। रंगोजी से संबंधित इन ग्रंथों में जंहागीर द्वारा प्रस्तुत संधि की शर्तों का प्रारम्भिक प्रारूप मात्र दिया गया है अतः उनमें अन्तर होना स्वाभाविक है। संधि होते समय इसमें दोनों पक्षों की इच्छानुसार अवश्य ही हेर फेर हुआ होगा।

(2) चितौड़ के किले की कभी मरम्तत नहीं की जायेगी। रंगोजी से संबंधित इन ग्रन्थों में जंहागीर द्वारा प्रस्तुत संधि की शर्तों का प्रारम्भिक प्रारूप मात्र दिया गया है अतः उनमें अन्तर होना स्वाभाविक है। संधि होते समय इसमें दोनों पक्षों की इच्छानुसार अवश्य ही हेर—फेर हुआ होगा।

कोई आश्चर्य नहीं। संभव है हरदास झाला और शुभकर्ण ने महाराणा को संधि के लिए तैयार करने का कार्य भी रंगोली बोल्या के संकेत पर ही किया हो। प्रस्तुत सामग्री के आधार पर इस संधि की परिस्थितियों पर पुनर्विचार की आवश्यकता है।

रंगोली का नामोल्लेख हमें इन तीन ग्रन्थों के अतिरिक्त अन्यत्र नहीं मिलता परंतु रंगोजी के ही वंशज इस बोळया–परिवार के कई एक व्यक्तियों का हमें मेवाड़ और मेवाड़ के बाहर भी कई महत्वपूर्ण उच्च पदों पर कार्य करने का उल्लेख मिलता है, जिनमें एकलिंगदास बोल्या का नाम प्रमुख है। प्रस्तुत सामग्री के आधार अंतिम दो ग्रन्थ भी इसी परिवार की पैतृक सम्पत्ति रही है। मैं श्री भगवतीलाल जोशी एम.ए. (बराणा, तहसील, आसीद) का आभारी हूं जिनके द्वारा ये ग्रन्थ मुझे उपलब्ध हुए है।

उपर्युक्त गीत वाला ग्रन्थ 27 सै.मी. 22 सै.मी. के आकार का है। इसमें 1803–1806 वि. तक कँवर मोतीराम बोल्या के पढ़ने के लिए, प्रतिलिपित किए गए (1) सुन्दर सिंगार (2) रसिक प्रिया (3) मधुमालती (4) नक्षत्र चूड़ामणि शकुनावली (5) वृन्द सतसई (6) हरिसर (7) बिहारी सतसई आदि रचनाओं के साथ स्फुटगीत, कवितादि का संग्रह है। उक्त गीत प्रथम पत्र के पृष्ठ भाग पर प्रतिलिपित है। दूसरे गुटके में रंगोजी के बेटे चोखाजी द्वारा, भोजग, चारण और एक नटणी, जिसने गोकनजी की देह (गोकर्णेश्वह्रद–राजमहल के पास बनास नदी पर) पर बरत बांधकर नृत्य किया था, को तीन लाख पसाब दान देने की सूचना मिलती है। प्रतीत होता है यह गीत इसी चारण ने रचा होगा। इसमें इस चारण के एक वंशज का नाम भैरूदान दिया गया है, जो इस वर्णन के लेखन के समय (महाराजा सज्जनसिंह के राज्यकाल में) जीवित रहा होगा।

दूसरा गुटका 24 सै. मी. 17 सै. म. आकार द्दका है। इसमें संगृहित सामग्री सं. 1904 वि. से. 1947 तक की है। संगृहित सामग्री निम्न प्रकार है (1) 36 राजकुळियों में से प्रमुख 23 शाखाओं (मोती के) नाम। (2) बापारावल से निकली सीशोदियों की 24 शाखाओं के नाम (3) महाराणा कुंभा और उसके बाद निकली सीसोदियों की शाखाओं के नाम, (4) मेवाड़ के आसवाल प्रधानों की याददास्ता (यह याददास्त 40.5 सै. मी. 15.5 के कागज पर लिखकर गुटके में चिपका दी गई है।) (5) पद्दिनी की घटना से सम्बन्धित सूचना (यह भी एक लम्बे कागज पर लिखकर गुटके में चिपका दी गई है – इसका आधा अंश अप्राप्त है) (6) राणाओं की पीढयावली सं. 1941 तक (7) ढोलमरवणी + मालवणी चौपाई (लि का. 1804 वि.) (8) स्फुट स्त्रवन कुंडलिया आदि (9) बोल्या वंश की उत्पत्ति और इतिहास (10) अकबर नामा। राणाओं की पीढयावली और बोल्या वंश की उत्पत्ति आदि से सम्बन्धित अंश सर्व प्रथम 1804 वि. से 1823 वि. के मध्य लिखा गया प्रतीत होता है। इसके बाद इसमें और अंश विभिन्न व्यक्तियों के द्वारा जोड़े जाते रहे हैं। ऐसा इसमें प्रयुक्त लिपि, स्याही आदि के भेद से स्पष्ट है।

इस वंश की उत्पत्ति और इतिहास का अंश अत्याधिक महत्वपूर्ण है, अतः स्वतन्त्र लेख में प्रकाशित किया जाएगा।

''श्री केशरियाजी''

कर कर वृथा थंथ दूजाँरो, वेंडा वगत गमायो सारो।
वी आछा ने वी खोटा तो, वी मोगेगा वॉरो।।
वी यूं कीधो वी यूं कीधो, थे कई कीधो थारो।।1।।
काम पड़यां पे काम न देवे, जोर जीभी होठां रो।
वातों मे हाथां मूं खोयो, मूंगो मन रव जमारो।।2।।
थूं आयो ने थें पण आवो ओजूं आप पधारो।
यूं आवा मे आयगियोयो, वो दिन बीछड़ वारो।।3।।
वो तो कीधो यो कर लेवूं, अतरो अब करवारो।
करवो तो यूं मियो नहीं ने, तेल नटययो, दीवारो।।4।।
थोड़ी वगत मांयन करणो, घणो काम करवारो।
चेना सार सार ले, लेणो, यो दिन ना आवारो।।5।।

–योगिवर्य स्व. महाराजा सा. श्री चतुरसिंह

सतियाँ

समय–समय पर निम्न सतियाँ होने का उल्लेख मिलता है जो यहाँ दर्शाया जा रहा है।

1. उणोयारे में सं. 1087 के श्री हरखाजी बोल्या 120 वर्ष उम्र पूरी कर स्वर्ग सिधारे। उनकी पत्नी श्रीमती हरखम देवी को सत चढ़ा, काष्ट भक्षण चढ़ी, खुद शमशान जाए चिता चुण बैठी। अग्नि देवी प्रकट हुई, हरकम देवी भष्ट हुई और बोली कि उजियाली 3, 13 जूजजे, अवलेह पालजो, छत्री बनाना, हाथों में मेहंदी नहीं देवे, पिल्या की ओख छे।
2. सं. 1592 उजाली 14 के दिन कोटा पास करवाड़ा ग्राम में भीमराज जी बूंलिया की पत्नी हस्तुदेवी सती हुई। चबूतरा बना हुआ है। पीलिया की आण छै।
3. चोखाजी के छोटे पुत्र करणजी का सं. 1726 भादवा विद 8 सोमवार को देहान्त हुआ । उनकी पत्नी कमलादेवी उनके साथ सती हुई। सं. 1733 बैसाख सुदी 13, रविवार को चौखाजी के चौथी संतान सुरजमलजी ने छतरी बनवा उसकी प्रतिष्ठा करवाई।
4. श्री जैचंद जी बोल्या के लड़के गणराजजी की पत्नी श्रीमती गंभीरी देवी सं. 1797 में भीलाड़ ग्राम के तालाब ऊपर सती हुई। उनकी याद में छतरी तालाब पर बनी हुई है।
5. सं. 1828 का आसाड़ सुद 13 आदिव्यवार के दिन श्री गुलाबचंदजी की पत्नी जेवाईग्राम सोपर मध्य श्मशान में सती हुई। नीम पीपल की झाड़ के नीचे छतरी बनी हुई है। सती पूजजे, काली चूनरी नहीं पेरजे, सती को दोष छै, अगरणी नहीं रखे, राती जगो दीपमाला का को देणो। पूजवा जाणो नारियल बधारणो। बूंलिया के घर शादी कर आवे जब पहले सती को चबुतरो पर धोक लगावे। कुल में सदा आनन्द होवें।
6. सं. 1838 का जयेष्ट विद 1 को प्रधान मोजीरामजी की पत्नी श्रीमती साकरबाई, आयड़ उदयपुर में सती हुई। चबुतरा बना हुआ है।

प्राचीन ग्रन्थ के आधार पर लालाजी ने उदयपुर में धर्मशाला का निर्माण कराया बताया है परन्तु कब और कहाँ बनाई इसका वृतान्त नहीं है। धर्मशाला बनाने में श्री लालाजी, खीमराजजी, लोहट जी और भारमल जी बोल्या ने सहयोग दिया।

बोल्या गोत्रिय परिवार जो क्षत्रिय (चौहान) वंश की संतान है । इस गोत्र को महारक कनकसूरिजी ने ओसवाल (जैन, महाजन) वंश में स्थापित किया। इस गोत्र को महाराणा मेवाड़ एवं अन्य क्षत्रिय महाराणा द्वारा सभी प्रकार का सम्मान दिया जाता रहा । इसी प्रसंग में महाराणा सा. एवं राज दरबारियों की बैठक के सम्मुख इस गोत्र की प्रशंसा करते हुए बारहट कवि ने महाराणा के दरबार में निम्न छन्द कहा जो इतिहास साक्षी है :–

''रंगा चौखा राजसी करनी बड़ी कुमेर।
बोल्या बीजिया वाणिया रात दिवस रो फेर।।''

इससे यह ज्ञात होता है कि बोल्या (बूंलिया) गोत्र अन्य ओसवाल गोत्रों से ज्यादा सम्मानित एवं प्रशसंनीय रहा है।

बोल्या/बोलिया/बूंलिया परिवार के प्रमुख सदस्य जिन्होंने मेवाड़ राज्य के प्रमुख पदों पर सेवा प्रदान की और उनके द्वारा मेवाड़ महाराणा के कार्यों में सहयोग करते हुए अपनी ओर से किये गए कार्य का विवरण की ख्यात की प्रति प्रस्तुत करते हुए हमें हर्ष एवं गर्व का अनुभव हो रहा है।

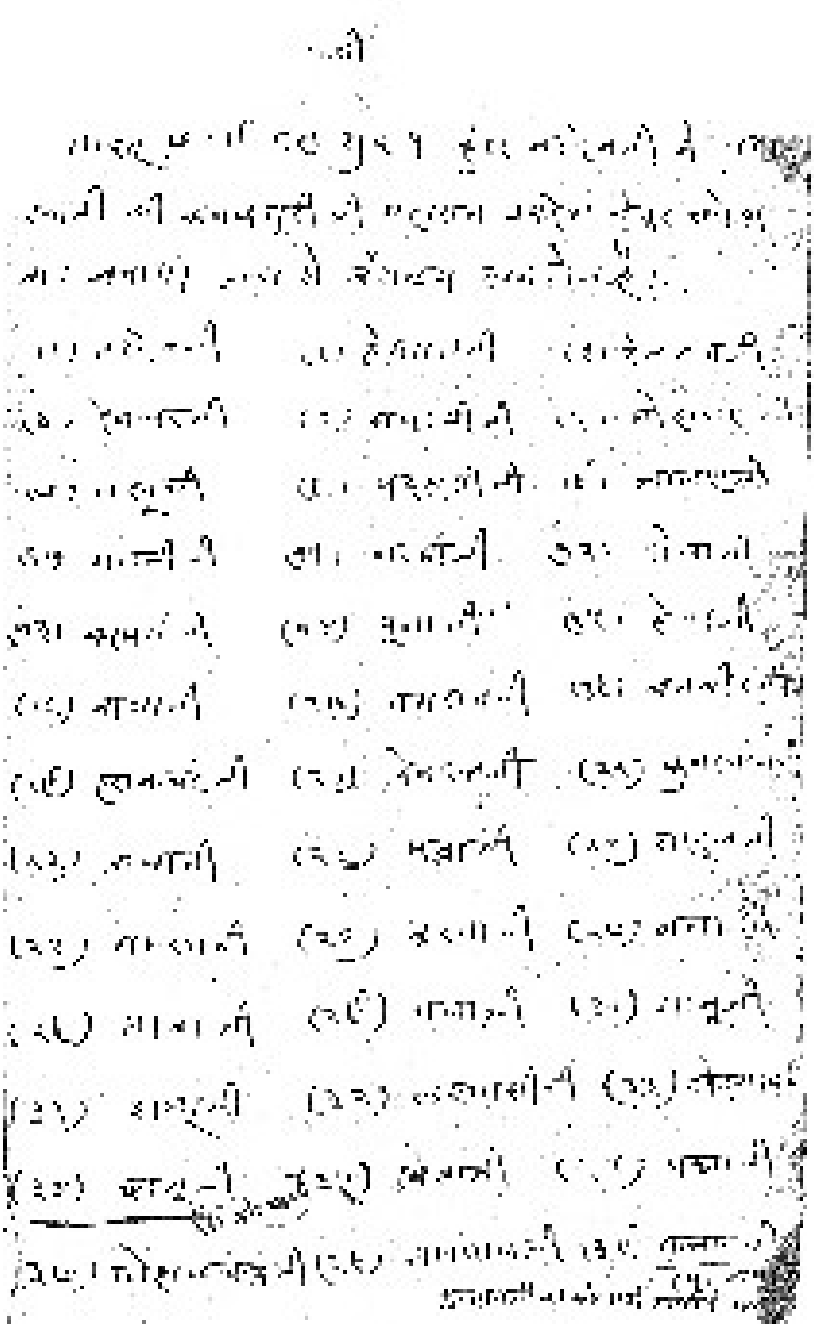

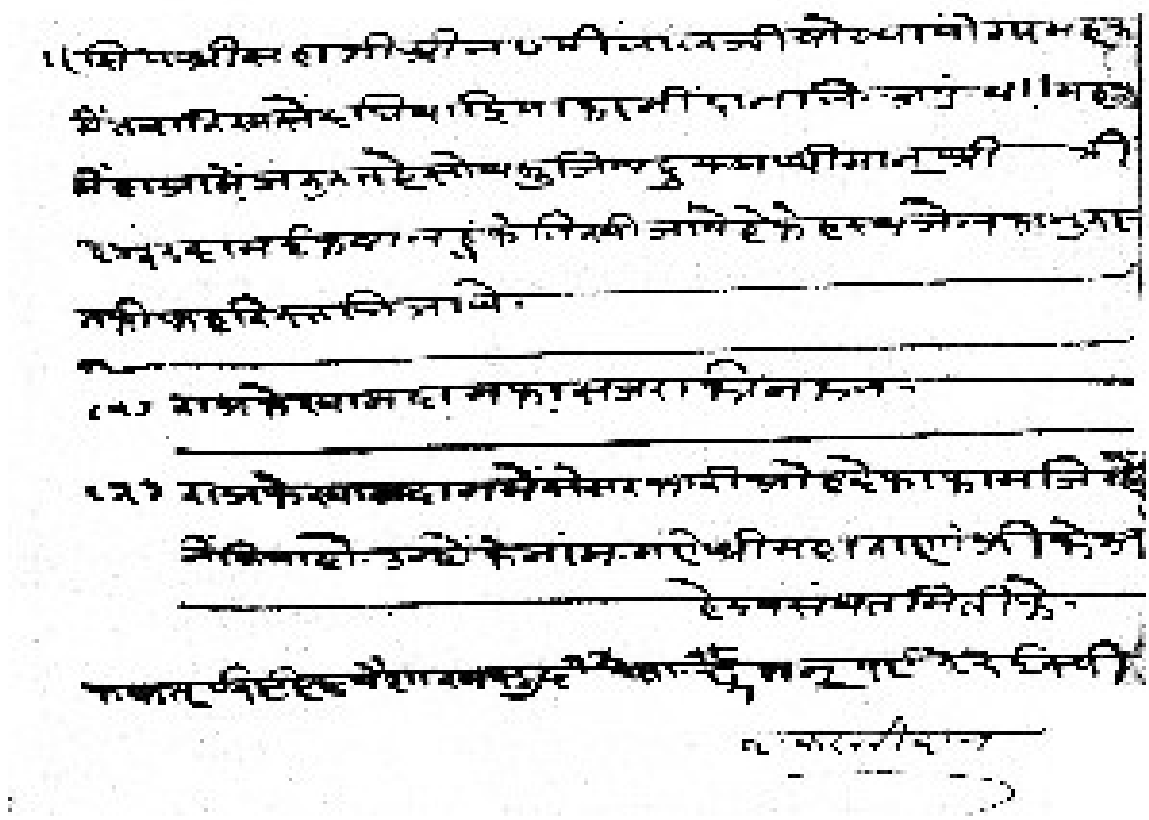

विधान की नियमावली (30.9.2011 तक संशोधित)

1.	संस्था का नाम	इस संस्था का नाम बोल्या (बूंलिया) विकास संस्था है व रहेगा।
2.	पंजिकृत कार्यालय एवं कार्यक्षेत्र	इस संस्था का नाम पंजिकृत कार्यालयउदयपुर (राज.) में होगा तथा कार्य क्षेत्र राजस्थान राज्य क्षेत्र तक रहेगा।
3.	संस्था के उद्देश्य	1. इस संस्था का प्रमुख उद्देश्य संगठन के सदस्यों, आश्रितों का सर्वांगिण सवीमुखी विकास करना है। 2. निर्धन, असहाय, जरूरतमंद छात्र/छात्राओं और स्त्री पुरुषों की सहायता करना है। 3. जरूरतमंद लोगों को रोजगार के अवसर सुलभ कराना है। 4. धार्मिक, व्यावहारिक और नैतिक शिक्षा की व्यवस्था करना। दहेज जैसी कुरीतियों के रोकथाम की प्रयास है। 5. प्राकृतिक आपदाओं जैसे अकाल, तुफान, बाढ, महामारी आदि के समय राहत पहूँचाना। 6. नैतिक आध्यात्मिक एवं शैक्षणिक उन्नति के प्रयास । 7. महापुरुषों के जन्म दिवस मनाना। उनके आदर्शो का प्रसार करना। 8. राजकीय/अर्द्धशासकीय/गैर शासकीय संस्थाओं के क्षण सहयोग एवं अनुदान प्राप्त करना। उपरोक्त उद्देश्यों की पूर्ति में कोई लाभ निहित नहीं है।
4.	सदस्यता	निम्न योग्यता रखने वाले व्यक्ति संगठन के सदस्य बन सकते हैं। 1. संस्था के कार्यक्षेत्र में निवास करते हो । 2. बालिग हों । 3. पागल/दिवालिये न हों। 4. संस्था के हित को सर्वोपरि मानते हों। 5. संस्था के हित को सर्वोपरि मानते हों।
5.	सदस्यों का वर्गीकरण	संस्था के सदस्य निम्न प्रकार वर्गीकृत होंगे। 1. संरक्षक 2. विशिष्ठ 3. सम्मानीय 4. साधारण
6.	सदस्योंद्वारा प्रदान शुल्क व चन्दा	सदस्यों द्वारा निम्न शुल्क व चन्दा देना होता है– 101/–रु. वार्षिक, 1000/– आजीवन
7.	सदस्यों का निष्कासन	संस्था के सदस्योंका निष्कासन निम्न प्रकार होगा। 1. मृत्यु होने पर। 2. त्याग–पत्र देने पर।

3. संस्था के उद्देश्यों के विपरीत कार्य करने पर।

4. प्रबन्ध कार्यकारिणी द्वारा दोषी पाए जाने पर।

उक्त प्रकार के निष्कासन की अपील 15 दिन के अन्दर–अन्दर लिखित में आवेदन करने पर साधारण सभा के निर्णय हेतु वैध सभा आहुत की जायेगी तथा साधारण सभा के बहुमत का निर्णय अंतिम होगा।

8. साधारण सभा — संस्था के उप निमय 5 में वर्णित समस्त प्रकार के सदस्य मिलकर साधारण सभा का निर्णय करेगें।

9. साधारण सभा के अधिकारी और कर्तव्य — साधारण सभा के निम्न अधिकारी व कर्तव्य होंगे।

1. प्रबन्ध कारिणी का चुनाव करना।
2. वार्षिक बजटपारितकरना।
3. प्रबन्धकारियों द्वारा किये गये कार्यों की समीक्षा करना व पुष्टि करना।
4. संस्था के कुल सदस्यों के 2/3 बहुमत से विधान मे संशोधन/परिवर्तन अथवा परिवर्द्धन करना।
5. जो रजिस्ट्रार के कार्यालय में फाईल कराया जाकर प्रमाणित प्रति प्राप्त कर लागू होगा।

10. साधारण सभा की बेठकें

1. साधारण सभा की वर्ष में एक बैठक अनिवार्य रूप से होगी लेकिन आवश्कता पड़ने पर विशेष सभा अध्यक्ष/मंत्री द्वारा कभी भी बुलाई जा सकेगी।
2. साधारण सभा की बैठक का कोरम कुल सदस्यों का 1/3 होगा।
3. बैठक की सूचना 7 दिन के पूर्व व आवश्यक बैठक की सूचना 3 दिन पूर्व दी जा सकेगी।
4. कोरम के अभाव में बैठक स्थगित की जा सकेगी जो पुनः 7 दिन पश्चात निर्धारित स्थान व समय पर आहूत की जा सकेगी। ऐसी स्थगितबैठक में कोरम की कोई आवश्यकता नहीं होगी लेकिन विचारणीय विवरण नहीं होंगे जो पूर्व एजेण्डा में थे।
5. संस्था के 1/3 अथवा 15 सदस्य इसमें से जो भी कम हो, के लिखित में आवेदन करने पर संरक्षक/अध्यक्ष/मंत्री द्वारा एक माह के अन्दर–अन्दर बैठक करना अनिवार्य होगा। निर्धारित अवधि में संरक्षक/अध्यक्ष/मंत्री द्वारा बैठक नहीं बुलाने पर उक्त 15 सदस्य में से कोई भी तीन सदस्य नोटिस कर सकेगें तथा इस प्रकार की बैठक में होने वाले समस्त निर्णय वैधानिक व खर्च मान्य होगें।

11. कार्यकारिणी का गठन — प्रबन्ध कार्यकारिणी कागठन संस्था के कार्यों को सुचारू रूप से चलाने के लिए किया जावेगा जिसके पदाधिकारी व सदस्य निम्न प्रकारके होंगे।

1. संरक्षक	2
2. अध्यक्ष	1
3. उपाध्यक्ष	2

	4. सचिव	2
	5. संयुक्त सचिव	1
	6. कोषाध्यक्ष	1
	7. सदस्य	7
	8. विशिष्ट सदस्य	7

संस्था की साधारण सभा में संस्थान के समस्त पूर्व अध्यक्षों को विशिष्ठ कार्यकारिणी सदस्य के रूप में सम्मिलित करने का निर्णय किया गया परन्तु उनको कोई मताधिकार नहीं होगा एवं कार्यकारिणी के सदस्यों की संख्या तदनुसार बढ़ी हुई मानी जायेगी।

12. कार्यकारिणी का निर्वाचन

1. संस्था की प्रबन्धकारिणी का चुनाव दो वर्ष की अवधि के लिए साधारण सभा द्वारा किया जायेगा।
2. वार्षिक प्रत्यक्ष/अप्रत्यक्ष प्रणाली द्वारा किया जावेगा।
3. चुनाव अधिकारी की नियुक्ति प्रबन्धकारिणी द्वारा की जावेगी।

13. कार्यकारिणी के अधिकारी और कर्त्तव्य

संस्था की कार्यकारिणी के निम्न अधिकार व कर्त्तव्य होंगें।

1. सदस्य बनाना/निष्कासित करना।
2. वार्षिक बजट तैयार करना।
3. संस्था की सम्पत्ति की सुरक्षा करना।
4. वैतनिक कर्मचारियों की नियुक्ति करना तथा उनके वेतन/भत्ते का निर्धारण करना, सेवा से पृथक करना।
5. साधारण सभा द्वारा पारित निर्णयों को क्रियान्वित करना।
6. कार्य व्यवस्था हेतु उप समितियाँ बनाना।
7. अन्य कार्य जो संस्था के हितार्थ हो करना।

14. कार्यकारिणी की बेठकें

1. कार्यकारिणी की वर्ष में कम से कम 5 बार बैठक अनिवार्य होगी लेकिन आवश्यकता पड़ने पर बैठक अध्यक्ष / मंत्री द्वारा कभी भी बुलाई जा सकेगी।
2. बैठक का कोरम प्रबन्ध कार्यकारिणी की कुल संख्या के आधे से अधिक होगी।
3. बैठक की सूचना प्रायः 7 दिन पूर्व दी जावेगी तथा परमावश्यक बैठक की सूचना कम समय में दी जा सकती है।
4. कोरम के अभाव में बैठक स्थगित की जा सकेगी जो पुनः दूसरे दिन निर्धारित स्थान व समय पर होगी। ऐसी स्थिति में स्थगित बैठक में कोरम की आवश्यकता नहीं होगी लेकिन विचारणीय विषय वहीं होंगें जो बैठक के एजेण्डे में थे। ऐसी स्थगित बैठक में उपस्थित सदस्यों के अतिरिक्त प्रबन्ध कार्यकारिणी से कम से कम दो सदस्यों/पदाधिकारियों की उपस्थिति अनिवार्य होगी। इस सभा की कार्यवाही की पुष्टि आगामी आम सभा में करना आवश्यक होगा।

15. प्रबन्धकारिणी के पदाधिकारियों के संस्था की प्रबन्ध कार्यकारिणी के पदाधिकारियों के निम्न अधिकार व कर्त्तव्य होंगें।

(अ) संरक्षाक

1. बैठकों की अध्यक्षता करना।
2. मत बराबर आने पर निर्णायक मत देना।
3. बैठकें आहूत करना।
4. संस्था का प्रतिनिधित्व करना।
5. संविदा तथा अन्य दस्तावेजों पर हस्ताक्षर करना।
6. कार्यकारिणी को विशेष परिस्थिति में भंग करना।
7. आवश्यकता होने पर कार्यकारिणी का अस्थायी रूप से पुनर्गठन करना व कार्यकारिणी में नये सदस्यों का मनोनयन करना।

(ब) अध्यक्ष

1 बैठकों की अध्यक्षता करना।

2. बैठकें आहूत करना।

3. संस्था का प्रतिनिधित्व करना।

4. संविदा तथा अन्य दस्तावेजों पर हस्ताक्षर करना।

(स) उपाध्यक्ष-

1. अध्यक्ष की अनुपस्थिति में अध्यक्ष के समस्त अधिकारों का उपयोग करना।

2. प्रबन्ध कार्यकारिणी द्वारा प्रदत्त अन्य अधिकारों का उपयोग करना।

(द) मंत्री/सचिव-

1. बैठक आहूत करना।
2. कार्यवाही विवरण लिखना व रिकार्ड रखना।
3. आय–व्यय पर नियंत्रण करना।
4. वैतनिक कर्मचारियोंपर नियंत्रण रखना तथा उनके वेतन/भत्ते व यात्रा बिल आदि पास करना।
5. संस्था का प्रतिनिधित्व करना व कानूनी दस्तावेजों पर संस्था की ओर से हस्ताक्षर करना।
6. पत्र व्यवहार करना।
7. सम्पत्ति की सुरक्षा हेतु अन्य कार्य जो आवश्यक हो।

(य) कोषाध्यक्ष-

1. वार्षिक लेखा–जोखा तैयार करना।
2. दैनिक लेखों पर नियंत्रण करना।
3. चन्दा/शुल्क/अनुदान आदि प्राप्त कर रसीद देना।

4. अन्य प्रदत्त कार्य।

(ख) सह सचिव-

1. मंत्री/सचिव की अनुपस्थिति में मंत्री पद के समस्त कार्य संचालित करना।

2. अन्य कार्य जो प्रबन्धकारिणी, मंत्री द्वारा सौंपे जावें।

16. संस्था का कोष

संस्था का कोष निम्न प्रकार से संचित होगा –

1. चन्दा

2. शुल्क

3. अनुदान

4. सहायता

5. राजकीय अनुदान

क– उक्त प्रकार से संचित राशि किसी राष्ट्रीयकृत बैंक में सुरक्षित की जावेगी।

ख– अध्यक्ष/मंत्री/कोषाध्यक्ष में से किन्हीं दो पदाधिकारियों के संयुयक्त हस्ताक्षरों से बैंक का लेन–देन संभव होगा।

17. कोष संबधी विशेषाधिकार

संस्था के हित में तथा कार्य व रुपये कीआवश्यकता के अनुसार निम्न पदाधिकारी संस्था की राशि एक मुश्त स्वीकृतकर सकतेहैं।

संरक्षक–	15,000/– रूपये
अध्यक्ष–	10,000/– रूपये
सचिव–	5,000/– रूपये
कोषाध्यक्ष–	5,000/–रूपये

उपरोक्त राशि का अनुमोदन प्रबन्धकारिणी से कराया जाना आवश्यक होगा।

18. कार्य का अंकेक्षण

संस्था के समस्त लेखा–जोखा का वार्षिक अंकेक्षण कराया जावेगा।

19. संस्था के विधान में परिवर्तन

संस्था के विधान में आवश्यकतानुसार साधारण सभा में कुल उपस्थित सदस्यों के 2/3 बहुमत से परिवर्तन, परिवर्द्धन अथवा संशोधन किया जा सकेगा जो, 'राजस्थान संस्था रजिस्ट्रीकरण अधिनियम 1958' की धारा 12के अनुरूप होगा।

20. संस्था का विघटन

यदि संस्था का विघटन आवश्यक हुआ तो संस्था की समस्त चल व अचल सम्पत्ति समान उद्देश्य वाली संस्था को हस्तांतरित कर दी जावेगी। लेकिन उक्त समस्त कार्यवाही 'राजस्थान संस्था रजिस्ट्रीकरण अधिनियम', 1958' की धारा 13 व 14 के अनुरूप होगी।

21. संस्था के लेखे–जोखे का निरीक्षण

रजिस्ट्रार संस्थाऐं व उनके प्रतिनिधी को संस्था के निरीक्षण का पूर्णअधिकारी होगा वउनकेद्वारा सुझावों की पूर्ती की जावेगी।

प्रमाणित किया जाता है कि उक्त विधान / नियमावली बोल्या (बूंलिया) विकास संस्था उदयपुर की सही व सच्ची प्रतिलिपि है।

नोट : इसमें कुछ प्रस्तावित संशोधन रजिस्ट्रार संस्थाएं उदयपुर से स्वीकृति मिलने के बाद किये जायेंगे।

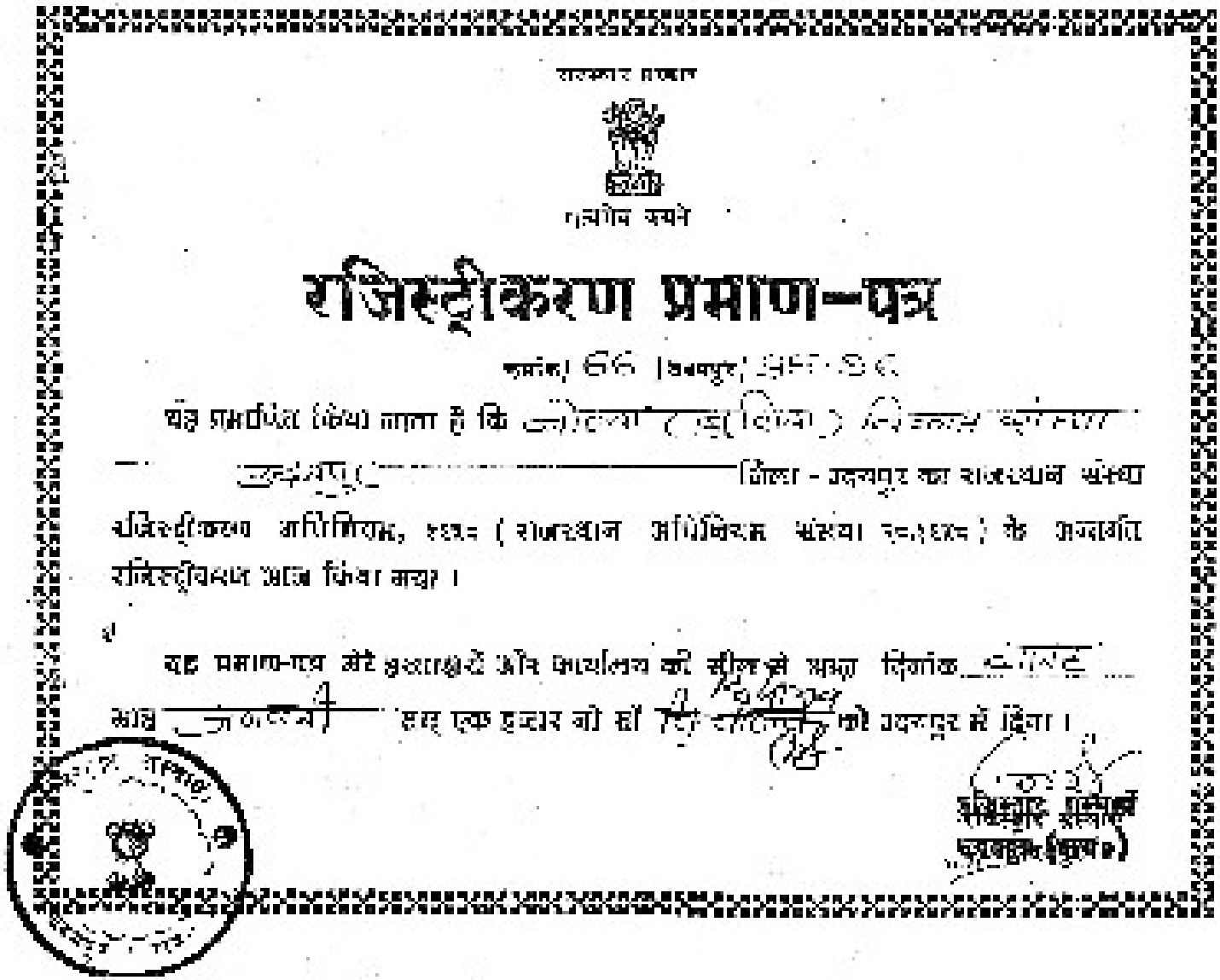

राजस्थान सरकार

सत्यमेव जयते

रजिस्ट्रीकरण प्रमाण–पत्र

क्रमांक 66 /उदयपुर/ [illegible]

यह प्रमाणित किया जाता है कि बोल्या (बूंलिया) विकास संस्थान

उदयपुर जिला – उदयपुर को राजस्थान संस्था रजिस्ट्रीकरण अधिनियम, 1958 (राजस्थान अधिनियम संख्या 28, 1958) के अन्तर्गत रजिस्ट्रीकृत आज किया गया।

यह प्रमाण-पत्र मेरे हस्ताक्षर और कार्यालय की सील से आज दिनांक [illegible] आज [illegible] सन् एक हजार नौ सौ [illegible] को उदयपुर में दिया।

रजिस्ट्रार, संस्थाएं
[illegible]
उदयपुर (संभाग)